

हिन्दू नाम

तथ्य और सत्य

स्वामी विज्ञानानन्द

हिन्दू नाम :
तथ्य और सत्य

संसार की किसी भी भाषा में हिन्दू से अच्छा शब्द नहीं है। अतः मुझे गर्व है कि मैं हिन्दू हूँ। तुम भी अपने आपको गर्व से कहो कि हम हिन्दू हैं।

—स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विज्ञानानन्द

हिन्दू नाम : तथ्य और सत्य ले. स्वामी विज्ञानानन्द

प्रथम संस्करण वर्ष प्रतिपदा—2056, मार्च, 2000
द्वितीय संस्करण, रक्षा बन्धन, 2060, अगस्त 2004,

ISBN 81–86970–08–X

मूल्य : 20 रुपए

हिन्दू राइटर्स फोरम (रजि.)
129 बी, एम. आई. जी. फ्लैट्स, राजौरी गार्डन,
नई दिल्ली–110027
दूरभाष : 25971638, 25115281

समर्पण

हिन्दुत्व के मन्त्र द्रष्टा

अमर हुतात्मा

देवता स्वरूप भाई परमानन्द

एवं

स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर

की पावन स्मृति में

सादर समर्पित

विषय-सूची

प्राक्कथन

सैकड़ों वर्षों से यही प्रचारित किया जा रहा है कि "हमारा 'हिन्दू' नाम ईरानियों ने दिया है जिसका प्रमाण उनके धर्म ग्रंथ, अवेस्ता में मिलता है", जो कि पूर्णतया असत्य है। यहाँ स्वामी विज्ञानानन्द ने अपने शोध कार्यों से सिद्ध किया है कि 'हिन्दू' नाम पूर्णतया भारतीय है जिसका स्रोत वेदों के सिन्धु शब्द में मिलता है। वेद हमारे प्रामाणिक धर्म ग्रन्थ हैं, अतः उनके 'सिन्धु' शब्द से निकला 'हिन्दु' शब्द भी प्रामाणिक एवं पूर्णतया भारतीय है।

ऐसा भी प्रचारित किया गया है कि हिन्दु नाम अपमानजनक है जैसा कि भारतीय फ़ारसी के शब्द कोशों में मिलता है। इनमें हिन्दू का अर्थ द्वेषवश, काला, चोर आदि किया गया है जो कि पूर्णतया असत्य है। अरबी व फ़ारसी भाषा में 'हिन्द' का अर्थ है 'सुन्दर' एवं 'भारत का रहनेवाला' आदि। इस संदर्भ में मुझे याद आता है कि जब 1980-82 में, मैं बगदाद में ईराक सरकार का वैज्ञानिक सलाहकार था तो मुझे वहाँ यह देखकर आश्चर्य हुआ कि अनेक युवक व युवतियों के नाम 'अलहिन्द' व 'विनत हिन्द' थे। तो मैंने आश्चर्यवश उनसे पूछा कि ये नाम तो हिन्दुओं जैसे लगते हैं, अरबियों जैसे नहीं। तो उन्होंने बताया कि हमारा 'हिन्द' नाम पूरी तरह अरबी है जिसका अर्थ है 'सुन्दर' और इसी भाव में हमारे ये नाम हैं।

कुछ लोगों ने अपने को 'हिन्दु' न कहकर 'आर्य' कहना ज्यादा उचित समझा है, किंतु रामकोश में सुस्पष्ट लिखा है कि—

हिन्दुर्दुष्टो न भवति नानार्यो न विदूषकः।
सद्धर्म पालको विद्वान् श्रौत धर्म परायणः॥

यानी "हिन्दु दुष्ट, दुर्जन व निन्दक नहीं होता है। वह तो सद्धर्म का पालक, सदाचारी, विद्वान, वैदिक धर्म में निष्ठावान और आर्य होता है।" अत: हिन्दू ही आर्य हैं और आर्य ही हिन्दू हैं। समय की माँग है कि हम इस विवाद को भूलकर मिल जुलकर हिन्दू धर्म व हिन्दू संस्कृति को उन्नत करने और हिन्दू राज्य स्थापित करने का प्रयास करें।

इसके अलावा स्वामी विज्ञानानन्द ने हिन्दु नाम की उत्पत्ति के विषय में उठाई गईं सभी आपत्तियो का सप्रमाण सटीक उत्तर दिया है और सिद्ध किया है कि हमारा हिन्दु नाम हजारों वर्षों से चला आ रहा है जिसके वेदोत्तर संस्कृत व लौकिक साहित्य में व्यापक प्रमाण मिलते हैं। अत: हिन्दू नाम पूर्णतया वैदिक, भारतीय और गर्व करने योग्य है। वस्तुत: यह नाम हमें विदेशियों ने नहीं दिया है बल्कि उन्होंने अपने अरबी व फ़ारसी भाषा के साहित्य में उच्च भाव में प्रयोग किया है। मुझे विश्वास है कि स्वामी जी की यह लघुपुस्तिका अनेक भ्रमों को दूर कर भारतीय संस्कृति की प्राचीनता का अर्वाचीन संस्कृति से जोड़ने का महान कार्य करेगी एवं प्रेरणा स्रोत सिद्ध होगी।

स्वामी विवेकानन्द से लेकर आधुनिक विद्वानों ने हिन्दुओं के भावी अस्तित्व के बारे में कड़ी चेतावनियाँ दीं हैं, तथा अनेक उपाय सुझाए हैं। हिन्दुओं की गिरती प्रतिशत जनसंख्या भी एक गम्भीर चुनौती है। विद्वानों का अनुमान है कि

—भारतवर्ष में हिन्दू जनसंख्या की तुलना में मुस्लिम संख्या में बाहुल्य होने में 300 वर्ष लगेंगे। (सन्डे मैग्जीन, 13 फरवरी 1993)

—2300 ई. तक हिन्दुओं के कुछ अवशेष ही रह जाएँगे।.... (इस स्थिति में) गैर-मुसलमानों को भारत में जीवित रहने के दो ही विकल्प हैं। हिन्दू राज्य अथवा दारुल इस्लाम (बलजीत राय, विल इंडिया गो इस्लामिक)

—जिस गति से हिन्दू-मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात बदल रहा है, उसको देखते हुए 22वीं शताब्दी आते-आते इस देश में मुस्लिम बाहुल्य का हो जाना अवश्यम्भावी है (यूरोपीय विचारक, केनराड एल्स्ट)। परंतु हमारा अनुमान है कि जिस तेजी से मुसलमानों की आबादी, हिन्दुओं के धर्मान्तरण, हिन्दू लड़कियों के अपहरण तथा बंगलादेशी मुसलमानों की घुसपैठ से, बढ़ रही है एवं साथ ही सेक्यूलरवादी नीतियों के चलते मुसलमानों का बाहुल्य, 21वीं सदी में ही हो जाएगा, यदि हिन्दुओं ने इस्लामी आतंकवाद और मुस्लिम तुष्टीकरण नीति का डटकर विरोध नहीं किया तो। इतना ही नही, अल्पसंख्यकवाद, सेक्यूलरवाद और धर्म की स्वतंत्रता सम्बन्धी अनुच्छेदों (25-30) का भ्रामक अर्थ भी हिन्दुओं के अस्तित्व के लिए एक गम्भीर चुनौती है।

वतन की फिक्र कर नादां। मुसीबत आने वाली है।
तेरी बर्बादियों के मश्वरे हैं, आसमानों में।।
न समझोगे तो मिट जाओगे, ए हिन्दोस्तां वालो।
तुम्हारी दास्तां तक भी, न होगी दास्तानों में।।

आशा है जागरूक हिन्दू इन चुनौतियों का समाधान ढूँढ़ने का भरसक प्रयास करेंगे।

डॉ. कृष्ण वल्लभ पालीवाल
(अध्यक्ष-हिं.रा.फो)

1.	विषय प्रवेश

शताब्दियों से सम्पूर्ण भारतीय समाज "हिन्दू" नाम को अपने धार्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं जातीय समुदाय के सम्बोधन के लिए गर्व से प्रयोग करता रहा है। आज भारत ही नहीं, विश्व के कोने-कोने में बसे करोड़ों हिन्दू अपने को हिन्दू कहने में गर्व अनुभव करते हैं। वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने धर्म एवं संस्कृति से प्रेरणा पाकर असीम सफलता प्राप्त कर रहे हैं। वे उदात्त हिन्दू जीवन मूल्यों से स्फूर्ति पाकर समता और कर्मठता के आधार पर, भारत में ही नहीं, विदेशों में भी, अपनी श्रेष्ठता का परिचय दे रहे हैं। वे श्रेष्ठ मानवीय जीवन मूल्यों के आधार पर समाज में प्रतिष्ठित भी हो रहे हैं।

आरम्भ से लेकर आज तक यह नाम अत्यन्त लोकप्रिय रहा है। वर्तमान में भी इसकी लोकप्रियता दिनों-दिन बढ़ती जा रही है, तथा भविष्य में और अधिक होने की संभावना है। इस नाम को लेकर हम शताब्दियों तक बर्बर विदेशी आक्रान्ताओं से संघर्ष करते रहे हैं। हमारे विजय के उल्लास तथा पराजय के आँसू, दोनों ही इसी नाम से जुड़े हुए हैं। अत: यह नाम हमारे लिए सदा सर्वदा से ही गर्व का सूचक रहा है। परन्तु, अरबी, फ़ारसी तथा उर्दू के तथा-कथित मतान्ध, मिथ्यावादी, आधुनिक विद्वान, उनमें भी विशेषकर भारतीयों ने, इसकी मौलिकता, श्रेष्ठता और प्राचीनता पर उंगली उठाते रहे हैं। इन्होंने हिन्दू शब्द को **'नवीन' विदेशियों द्वारा थोपा हुआ', 'घृणास्पद'** और **'अपमान सूचक'** कहकर प्रचारित किया है। उपरोक्त कुप्रचार को ब्रिटिश राज्य काल में व्यापक समर्थन मिला। दु:ख है कि आज स्वाधीन भारत में भी यह कुप्रचार बराबर चल रहा है।

हिन्दू पुनर्जागरण के पुरोधा महर्षि दयानन्द सरस्वती, युवा हिन्दू सम्राट स्वामी विवेकानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, योगी श्री अरविन्द, भाई परमानन्द, स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सवारकर आदि महापुरुषों ने 'हिन्दू' नाम को गर्व के साथ स्वीकार कर आदर प्रदान किया है। स्वामी विवेकानन्द एवं स्वास्त्र्य वीर सावरकर ने हिन्दू नाम के विरुद्ध चलाए जा रहे मिथ्या कुप्रचार का पूर्ण सामर्थ्य से विरोध किया। सावरकर जी ने प्राचीन भारतीय शास्त्रों के आधार पर इस नाम की मौलिकता को बड़ी प्रामाणिकता के साथ पुनः स्थापित किया तथा बल देकर सिद्ध किया कि **'हिन्दु नाम पूर्णतया भारतीय है जिसका मूल स्त्रोत वेदों का प्रसिद्ध 'सिन्धु' शब्द है।''**

गणमान्य विद्वानों की स्वीकृति के बाद, इस अवधारणा को व्यापक समर्थन मिला है। परन्तु आज भी कुछ भ्रमित जन इसके विरोध में नवीन कुतर्कों का आडम्बर खड़ा करके दुष्प्रचार कर रहे हैं। वर्षों से हो रहे कुप्रचार के कारण अनेक हिन्दुओं के मन में आज भी 'हिन्दू' शब्द की उत्पत्ति के बारे में भ्रम एवं संदेह बना हुआ है। इन सब को ध्यान में रखते हुए यहाँ हिन्दू शब्द सम्बन्धी कुछ प्रमुख विषयों पर विचार किया जा रहा है जैसे—(1) हिन्दूनाम कहाँ से आया और कैसे बना, (2) इसकी प्राचीनता क्या है, (3) हिन्दू कौन है, उसके क्या लक्षण हैं ? (4) हिन्दू का भविष्य आदि आदि। साथ ही 'हिन्दू' शब्द की उत्पत्ति पर लगाए गए आक्षेपों का भी आधुनिक भाषा विज्ञान, इतिहास एवं प्राचीन संस्कृत, अरबी व फ़ारसी साहित्य के आधार पर प्रामाणिकता के साथ समुचित उत्तर दिया गया है। साथ ही हिन्दू धर्म एवं संस्कृति को परम वैभव पर पहुँचाने के लिए हिन्दू समाज को एक जुट होकर संघर्ष करने का आह्वान किया गया है।

2. हिन्दू शब्द का मूल एवं प्राचीनता

हिन्दू शब्द का प्रयोग कब से प्रारम्भ हुआ, इसकी कोई निश्चित तिथि बताना कठिन अथवा विवादास्पद होगा। परन्तु यह सत्य है कि हिन्दू शब्द अत्यन्त प्राचीन वैदिक वाङ्मय के ग्रन्थों में साक्षात् नहीं पाया जाता है। परन्तु यह भी निर्विवाद है कि हिन्दू शब्द का मूल निश्चित रूप से वेदादि प्राचीन ग्रन्थों में विद्यमान है। औपनिषदिकोत्तर काल के प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत एवं मध्यकालीन साहित्य में हिन्दू शब्द पर्याप्त मात्रा में मिलता है। अनेक विद्वानों का मत है कि हिन्दू शब्द प्राचीन काल से सामान्य जनों की व्यावहारिक भाषा में प्रयुक्त होता रहा है। जब प्राकृत एवं अपभ्रंश शब्दों का प्रयोग साहित्यिक भाषा के रूप में होने लगा, उस समय सर्वत्र प्रचलित हिन्दू शब्द का प्रयोग संस्कृत ग्रंथों में होने लगा। ब्राहिर्स्पत्य शास्त्र, कालिका पुराण, कवि कोश, राम कोश, अद्‌भुत कोश, मेदिनी कोश, शब्द कल्पद्रुम, मेरूतन्त्र, पारिजात हरण नाटक, भविष्य पुराण, अग्नि पुराण और वायु पुराणादि संस्कृत ग्रंथों में हिन्दू शब्द जाति अर्थ में सुस्पष्ट मिलता है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि इन संस्कृत ग्रन्थों के रचना काल से पहले भी हिन्दू शब्द का जन समुदाय में प्रयोग होता था।

संस्कृत साहित्य में 'हिन्दु' शब्द

संस्कृत साहित्य में पाए गए हिन्दु शब्द के कुछ प्रमाण यहाँ दिए जा रहे हैं—

(1) हिंसया दूयते यश्च सदाचरण तत्परः।
वेद.........हिन्दु मुख शब्दभाक्।।(वृद्ध स्मृति)

"जो सदाचारी वैदिक मार्ग पर चलने वाला, हिंसा से दुःख मानने वाला है, वह हिन्दू है।"

(2) बलिना कलिनाच्छन्ने धर्मे कवलिते कलौ।
यवनैर वनीक्रान्ता, हिन्दवो विन्ध्यमाविशन्।।

(कालिका पुराण)

"जब बलवान कलिकाल ने सबको प्रच्छन्न कर दिया और धर्म उसका ग्रास बन गया तथा पृथ्वी यवनों से आक्रान्त हो गई, तब हिन्दू खिसककर विन्ध्याचल की ओर चले गए।"

इसी प्रकार का भाव यह श्लोक भी प्रकट करता है :

(3) यवनैरवनी क्रान्ता, हिन्दवो विन्ध्यमाविशन्।
बलिना वेदमार्गोऽयं कलिना कवलीकृतः ॥

(शार्ङ्गधर पद्धति)

"यवनों के आक्रमण से हिन्दू विन्ध्याचल पर्वत की ओर चले गए।"

(4) हिन्दुः हिन्दूश्च प्रसिद्धौ दुष्टानां च विघर्षणे।

(अद्भुत कोश)

"'**हिन्दु**' और '**हिन्दू**' दोनों शब्द दुष्टों को विघर्षित करने वाले अर्थ में प्रसिद्ध हैं।"

(5) "हिन्दु सद्धर्म पालको विद्वान् श्रौत धर्म परायणः।

(राम कोश)

"हिन्दु सद्धर्म पालक, विद्वान् और वैदिक धर्म में निरन्तर रत रहता है।"

(6) हिन्दुः हिन्दूश्च हिन्दवः। (मेदिनी कोश)

"हिन्दु, हिन्दू और हिन्दुत्व तीनों एकार्थक हैं।"

(7) हिन्दु धर्म प्रलोप्तारौ जायन्ते चक्रवर्तिनः।
हीनश्च दूषयप्येव स हिन्दूरित्युच्यते प्रिये।। (मेरु तन्त्र)

"हे प्रिये! हिन्दू धर्म को प्रलुप्त करने वाले चक्रवर्ती राजा उत्पन्न हो रहे हैं। जो हीन कर्म व हीनता का त्याग करता है, वह हिन्दू कहा जाता है।"

(8) हिनस्ति तपसा पापान् दैहिकान् दुष्टमानसान्।
हेतिभिः शत्रुवर्गः च स हिन्दुः अभिधीयते।।
(परिजातहरण नाटक)

"जो अपनी तपस्या से दैहिक पापों तथा चित्त को दूषित करने वाले दोषों का नाश करता है, तथा शस्त्रों से अपने शत्रु समुदाय का भी संहार करता है, वह हिन्दू है।"

(9) हीनं दूषयति इति हिन्दू जाति विशेषः (शब्द कल्पद्रुमः)

"हीन कर्म का त्याग करने वाले को हिन्दू कहते हैं।"

इन प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि प्राचीन एवं अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में हिन्दू शब्द का पर्याप्त उल्लेख ही नहीं मिलता है, बल्कि हिन्दू के लक्षणों को भी दर्शाया गया है।

हिन्दू नाम की प्राचीनता

जैसा कि हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि अत्यन्त प्राचीन वेदादि हिन्दू धर्म ग्रन्थों में साक्षात् रूप से हिन्दू शब्द नहीं पाया जाता है, परन्तु इसका मूल निश्चित रूप से वहाँ विद्यमान है। यह सत्य है कि हिन्दू शब्द साक्षात् अत्यन्त प्राचीन नहीं है, परन्तु इतना अर्वाचीन भी नहीं है जैसा कि कुछ भ्रमित विद्वान् कहते हैं। हिन्दू शब्द का मूल वेदों में होने से यह अपने आपको स्वतः वेदों की प्राचीनता से भी सम्बद्ध हो जाता है। हिन्दुत्व के मीमांसाकार वीर सावरकर इसे चार हजार वर्ष पुराना मानते

हैं। **"यदि अधिक नहीं तो कम से कम हमारा 40 शताब्दियों का इतिहास तो इस नाम के साथ ही सम्बद्ध रहा है।"** (हिन्दुत्व, पृ. 10)। रामधारी सिंह दिनकर के अनुसार **"डेरियस (522-486 ई. पू.) के शिलालेखों में भी हिन्दू शब्द का उल्लेख है"** (संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 112)। अतः इससे यह तो सिद्ध होता है कि शिलालेखों में आने से काफ़ी पहले भी हिन्दू नाम समाज में प्रचलित रहा होगा।

इसके अलावा पूर्वोक्त उद्धृत पुराण एवं शार्ङ्धर पद्धति का प्रमाण शकों एवं हूणों के आक्रमण का स्मरण कराता है। ये लगभग दो हजार से पन्द्रह सौ वर्ष पुराने प्रमाण हैं। परन्तु कुछ लोग पुराणों की ऐतिहासिकता को सर्वथा नकारने की मानसिकता से रोग ग्रस्त हैं। इस विषय में पुराणों की ऐतिहासिक प्रामाणिकता के सच्चे स्वरूप को समझने के लिए भारतवर्ष के अद्वितीय इतिहासकार विद्वान् पं. भगवद्दत जी लिखित ग्रन्थ "भारतवर्ष का वृहद् इतिहास" और उसका भी विशेषकर "हमारे इतिहास के स्रोत" अध्याय उपयोगी होगा। इन विवेचनों से यह सिद्ध होता है कि हिन्दू नाम तीन चार हजार वर्ष से कम पुराना नहीं है।

3. सिन्धु सिन्धु सिन्धु........हिन्दु

वीर सावरकर, डॉ. राधाकृष्णन् प्रभृति सभी प्रसिद्ध देशी-विदेशी विद्वान्, इस विचार पर निर्विवाद ही हैं कि वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य के सिन्धु शब्द जिसका आदि स्रोत विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ वेद है, उससे ही हिन्दु शब्द की उत्पत्ति हुई है। यह उत्पत्ति कैसे हुई, इसके लिए हमें वैदिक वाड्मय व्यवस्था को समझना उपयोगी होगा।

हिन्दू धर्म के मूलाधार ग्रंथ वेद घोषणा करते हुए कहते हैं :

देवी वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपा पशवो वदन्ति।

(ऋ 8/100/1)

"देव लोग जिस वाणी को प्रकट करते हैं, साधारण जन उसी को बोलते हैं।"

हिन्दुओं के आदि स्मृतिकार भगवान मनु स्वयं वेद की घोषणा को स्वीकार करते हुए कहते हैं :

सर्वेषां तु नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेद शब्देभ्य एवाऽऽदौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे।।

(मनुस्मृति 1/11)

"यदिहास्ति वदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।"

यानी "जो यहाँ है, वही अन्यत्र है, जो यहाँ नहीं है, वह अन्यत्र भी कहीं नहीं है" के घोषणाकार, महाभारत के रचयिता महर्षि कृष्ण द्वैपायन (वेदव्यास) लिखते हैं :

अनादि निधना नित्या वागुप्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वा प्रवृतयः ॥

(म. भा. शां. प. 232/24)

''परम कृपालु परमात्मा प्रति कल्प के प्रारंभ में ऋषियों को नित्या वाग् (वेद का ज्ञान) देता है, जिसका आदि और अन्त नहीं है और उसी वैदिक ज्ञान से समस्त लोक का व्यवहार प्रचलित होता है।''

पं. युधिष्ठिर मीमांसक मनुस्मृति के उपरोक्त श्लोक का मूल ऋग्वेद के इन मन्त्रों को मानते हैं, (संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. 2)

हरि सृजानः पथ्यामृततस्येति वाचमरितेव नावम्।
देवो देवानां गुहयानि नामा विष्कृणोति वर्हिषि प्रवाचो।।
(ऋ. 9/95/2)

वृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः।
यदेषां श्रेष्ठं यदरि प्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहावि।।
(ऋ. 10/71/1)

इन प्रमाणों से यह सिद्ध है कि लोक व्यवहार में प्रयुक्त होने वाले नामों का मूल वेद ही होता है। सर्वप्रथम नामों का वेद में उल्लेख होता है। तत्पश्चात् लोक वेद का अनुसरण करते हुए, वेद में उल्लिखित नामों से, अपने लोक में नामकरण करता है।

वेदों में सिन्धु शब्द

सिन्धु शब्द का वेदों में पर्याप्त उल्लेख मिलता है। सबको यहाँ प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है। नदी सूक्त के केवल दो मंत्रों को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है।

ऋग्वेद के दसवें मण्डल का 75वाँ सूक्त नदी सूक्त है जिसका ऋषि सिन्धुक्षित् प्रैयमेध है। एक या दो मंत्रों को छोड़कर सभी मंत्रों में सिन्धु शब्द का उल्लेख है।

(1) अभि त्वा सिन्धो शिशुमिन्न मातरो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः।
राजेव युध्वा नयसि त्वमित् सिचौ यदा सामग्रं प्रवतामिनक्षसि।।
(ऋ. 10/75/4)

(2) स्वश्वा सिन्धु सुरथा सुवाया हिरण्ययी सुकृता वाजिनीवती।
ऊर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधम्॥
(ऋ. 10/75/7)

ऋग्वेद के तृतीय मण्डल का 33वाँ सूक्त भी नदी सूक्त है। इसके ऋषि गाथिनो विश्वामित्र हैं। वहाँ भी सिन्धु का उल्लेख है। ऋग्वेद से अन्यत्र अथर्ववेदादि में भी सिन्धु का पर्याप्त उल्लेख है।

भारतीय भाषा परंपरा में यह सर्वत्र प्रसिद्ध है कि सकार चाहे पदादि में हो अथवा मध्य में या अंत में, उस सकार का हकार प्रायः हो जाता है। इस प्रकार का परिवर्तन प्रायः किसी निश्चित नियमानुसार नहीं होता है। पाठकों के समक्ष यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

वैदिक वाङ्मय में—

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौवहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि
अश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकं मऽइषाण॥
(यजुः पुरुष सूक्त, 31/22)

ह्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ। अहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपम्।
अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मनिषाण अमुं मनिषाण। सर्वं मनिषाण॥
(तैत्तिरीय आरण्यक 3/13/2)

उपरोक्त यजुर्वेद के मंत्र का आदि शकार[1], तैत्तिरीय आरण्यक में 'हकार' में परिवर्तित हो गया है, यानी श्री का ह्री हो गया है।

पाणिनीय व्याकरण में—

पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्-अष्टाध्यायी (6/3/109) सूत्र पर "काशिका" नामक प्रसिद्ध ग्रंथ में, प्राचीन आचार्यों द्वारा शब्दों के निर्वचन करने की प्रक्रिया का वर्णन है, जो इस प्रकार है—

वर्णागमों वर्ण विषर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्ण विकारनाशौ।

धातोस्तदर्थातिशयेन योगस्तदुच्यते पञ्चविधं निरुक्तम्।।

अर्थ—वर्ण का आगम, वर्ण विपर्यय, वर्ण विकार, वर्ण नाश, धातु का अर्थातिशय के साथ योग अर्थात् प्रसिद्ध अर्थ से भिन्न अर्थ में प्रयोग, इस पाँच प्रकार से निर्वचन होता है। वहीं पर वर्ण विपर्यय का उदाहरण दिया गया है—

हिंसि-हिंसायाम् धातु से अच् प्रत्यय करके नुम आगम कर आदि एवं अन्त वर्ण का विपर्यय कर सिंहः बनता है। इस उदाहरण में हिंसि धातु के हकार के स्थान पर सकार, तथा सकार के स्थान पर हकार हो गया है।

व्यत्ययो बहुलम् (अष्टा. 3/1/84)—इस सूत्र पर महाभाष्यकार ने—सुपां व्यत्ययः, तिङां व्यत्ययः, अनेक व्यत्ययों के साथ वर्ण व्यत्ययः पढ़ा। छन्दों से सम्बन्धित प्रस्तुत कारिका भी पढ़ी है।

सुप्तिङुपग्रह लिङ्गनराणां कालहल च् स्वर कर्तृयङां च।

व्यत्ययमिच्छति शास्त्रकृदेषां सोऽपि च सिध्यति बाहुलकेन॥

प्रत्ययों में—

सेर्ह्यपिच्च-(अ. 3/1/84)

अर्थ—लोडादेशस्य सिपः स्थाने "हि" इत्ययमादेशो भवति, अपिच्च भवति स आदेशः।। उदा-लुनीहि, पुनीहि आदि।

भावार्थ—लोट् लकार में सिप् = सि प्रत्यय के स्थान पर 'हि' आदेश होता है और वह आदेश अपित होता है।

यहाँ भी प्रत्यय के पदादि "स" का 'ह' हो गया है।

---

1. सकार में दन्त्य का ग्रहण होता है, परन्तु भाषा परिवर्तन में तालव्य 'श' एवं मूर्धन्य ष का भी यत्र तत्र ग्रहण होता है।

ह एति - (अ. 7/4/52)

अर्थ—तासस्त्योः सकारस्य हकारादेशो भवति एति परतः।

भावार्थ—तास् तथा अस् के सकार का हकारादेश एकार परे होता है। उदाहरण कत्ताहे, व्यतिहे।

यहाँ तास् तथा अस् के अंत में रहने वाले सकार का हकार हुआ है।

प्राकृत भाषा में—

अस्मि = ह्मि

युष्माकं = तुह्माणं

अस्माकं = अह्माणम्

यहाँ तीनों स्थानों के 'स' तथा 'ष' के स्थान में 'ह' हुआ है।

असमियाँ भाषा में—भारत के पूर्वाञ्चल में स्थित असम प्रदेश भारत पर मुस्लिम आक्रमण एवं शासन के अंत तक मुगलों या किन्हीं अन्य मुसलमानों के द्वारा आक्रान्त नहीं हो सका था। अतः असमियाँ भाषा पर किसी प्रकार का फ़ारसी एवं अरबी का प्रभाव नहीं पड़ सका। असमियाँ भाषा में संस्कृत के पदों में स्थित पदादि सकार का उच्चारण हकार होता है। यत्र तत्र धकार का दकार होता है। यह असमियाँ भाषा हमारी भाषा परंपरा की भाषा है।

"तत्सम शब्द कोश" (प्रकाशक केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय—मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली) में भारत की प्रमुख 15 भाषाओं के शब्दों का उल्लेख है। संस्कृत के शब्दों का अन्य भारतीय भाषाओं में क्या उच्चारण होता है, यह भी दिया हुआ है।

संस्कृत के शब्दों का असमियाँ भाषा में क्या उच्चारण होता है, उसमें से भी विशेषकर जहाँ पदादि **सकार** का उच्चारण **हकार** हुआ है, यहाँ लिखा जा रहा है—

संस्कृत	असमियाँ
संकट	हङ्कट
संकल्प	हङ्कल्प
संकीर्ण	हंकीर्ण
संकोच	हंकोच
संक्षेप	हंखेप
संख्या	हंख्या
संगम	हंगम
संगति	हंगति
संचार	हंचार
संतान	हंतान
संतोष	हन्तोष
सन्देश	हन्देश
सन्देह	हन्देह
संपादक	हम्पादक
संध्या (ध्)	हन्द्या (द्)

यहाँ संस्कृत संध्या के ''धकार'' का असमियाँ में ''दकार'' हो गया है।

हिन्दी एवं अन्य लोक भाषाओं में—

1. अस्-भुवि—धातु ''होना'' अर्थ में है। इसी अस् धातु के आदि अकार का लोप होकर 'स' को 'ह' बना है जिसे हिन्दी में ''है'' कहते हैं। हरियाणा की लोक भाषा में, इसी अस् धातु के आदि अकार का लोपकर 'सै' बोलते हैं।
2. हिन्दू तुरक दीन है गायो। तिनसौ वैर सदा चलि आयो।
   लेख्यो सुर असुरन को जैसो। केहरि कसि बखानो तैसो।।
   (छत्रसाल)

इस पद्य में संस्कृत शब्द केसरि का काव्य में केहरि बन गया है।

3. **पाहन पतित वाण न ही भेदत रीता करहु निषंग।** (सूरदास)

4. **पाहन ते ने काठ कठिर्माइ।** (तुलसीदास) इन दोनों पदों में संस्कृत शब्द **पाषाण** का काव्य में **पाहन** हो गया है।

इस प्रकार के उदाहरण, प्राकृत, अपभ्रंश एवं लोक साहित्य में ढूँढ़ने पर बहुतायत में मिल जायेंगे। यह आगे शोध का विषय है।

संस्कृत में एक लोक प्रसिद्ध श्लोक है—

आशीर्वादं न गृहणीयान्मरूस्थल निवासिनाम्।
शतायुरिति वक्तव्ये हतायुरिति कथ्यते॥

भाषार्थ—मरुस्थल वासियों का आशीर्वाद नहीं लेना चाहिए, क्योंकि वे '**शतायु** हो' ऐसा कहने के स्थान पर '**हतायु**' (नष्ट आयु) कह देते हैं।

राजस्थान के मेवाड़ एवं मारवाड़ क्षेत्र के समीपवर्ती स्थानों में भी पदादि **सकार** का उच्चारण **हकार** करते हैं। उदाहरणस्वरूप वे "सलुम्बर" नगर को "हलुम्बर" 'साँप' को 'हाँप' उच्चारण करते हैं। इसी प्रकार अन्यों का भी उच्चारण करते हैं। गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में भी पदादि **सकार** के स्थान में **हकार** उच्चारण करते हुए शक्कर को हक्कर कहते हैं।

सिन्धु से हिन्दु

चीनी यात्री हुएनसांग सम्राट हर्षवर्धन के समय अर्थात् सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत आया था। भारत भ्रमण के अपने संस्मरणों को उसने चीनी भाषा में लेखबद्ध किया। वह अपने संस्मरण में भारत को **शिन्तु** या **हिन्तु** लिखता है, जिससे यह ज्ञात होता है कि वह भी **सिन्धु** से **शिन्तु** तथा **हिन्दु** से **हिन्तु** ग्रहण करता है। वह लिखता है कि भारत का पुराना नाम **शिन्तु** या **हिन्तु** है। यही नहीं भारत से प्रेमवशात् अपने मन में अधिक आदर्श कल्पना करके वह भारत को चन्द्रमा से जोड़ते हुए लिखता है।

भारत को पुराने शिन्तु या हिन्दु के स्थान पर 'यिन्तु' कहना चाहिए (चीनी भाषा में यिन्तु का अर्थ चन्द्रमा होता है।) हुएनसांग की चीनी रचना का थामस वटर्स कृत आँग्लभाषानुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है। "We find that different counsels have confused the designations of **T'ien-chu** (India); the old names were **Shen-tu** and **Sien (or hien)-tou;** now we must conform to the correct pronunciation and call it **Yin-tu.** The people of Yin-tu use local appellations for their respective countries; the various districts having different customs; adopting a general designation and one which the people like, we call the country Yin-tu which means the "Moon'. (Vol. p.-131, "On Yuan Chwang's Travels in India')

भावार्थ—ऐसा दिखाई देता है कि, T'ien-chu (भारत) के नामों के विषय में विभिन्न वचनों के कारण भ्रम उत्पन्न हुआ है; पुराने नाम Shen-tu (शिन्तु) तथा Sien (or Hien)-tou (हिन्तु) थे; अब हमें सही उच्चारण कर उसे Yin-tu (यिन्तु) कहना चाहिए। Yin-tu (यिन्तु) के लोग अपने विभिन्न जनपदों एवं प्रदेशों के लिए स्थानीय नाम प्रयुक्त करते हैं। विभिन्न क्षेत्रों में पृथक्-पृथक् प्रथाएँ हैं; हम एक व्यापक नाम, जो जनता को प्रिय है, प्रयुक्त कर इस देश को Yin-tu (यिन्तु) कहेंगे, जिसका अर्थ **चन्द्रमा** है।

सैमुएल बील ने भी हुएनसांग के संस्मरणों का चीनी भाषा से आँग्लभाषानुवाद में ठीक इसी प्रकार के भाव प्रकट करते हुए किया है—"...the names of India (T'ien-chu) are various and perplexing as to their authority. It was anciently called Shin-tu, also Hien-tu; but now, according to the right pronuniation, it is called In-tu. In Chinese the name signifies the **Moon** so it is called **In-tu.**"

(Buddhist Record of the Western Word. tr. Samuel Beal, from the Chinese of Hiuen-Tsang London : Trubner & Co., 1884).

सिन्धु स्थान

भविष्य पुराण में सिन्धु से संबंधित एक श्लोक इस प्रकार है—

सिन्धुस्थानमिति ज्ञेयं राष्ट्रमार्यस्य चोत्तमम्।
म्लेच्छ स्थानं परं सिन्धोः कृतं तेन महात्मना॥

(प्रतिसर्ग पर्व, अ. 2)

भावार्थ—"सिन्धु के इस ओर का जो प्रदेश है, वह हमारा उत्तम सिन्धुस्थान एवं उस ओर का जो प्रदेश है, वह म्लेच्छस्थान है।"

सिन्धुजा से हिन्दुजा

अखण्ड भारत के पश्चिमी सीमान्त सिन्ध प्रदेश (वर्तमान पाकिस्तान में स्थित), विश्व विख्यात सिन्धु नदी के दोनों तटों पर फैला हुआ है। वहाँ के निवासी सिन्धी हिन्दु बन्धुओं में से बहुत से लोग अपने नाम के साथ आज भी "सिन्धुजा" लिखते है एवं बहुत से लोग "हिन्दुजा" लिखते हैं। सिन्धुजा से हिन्दुजा में रूपान्तरित होने की इस प्रत्यक्ष परंपरा का प्रकृति (सिन्धुजा) और उसका प्राकृत (हिन्दुजा) दोनों ही वर्तमान हैं।

असम में सिन्धु से हिन्दु

महाभारत के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि भारतवर्ष में दो सिन्धु नदी तथा दो सिन्धु प्रदेश थे। दोनों ही सिन्धु नदी एवं प्रदेश का निर्देश भीष्म पर्वान्तर्गत जम्बूखण्ड विनिर्माण पर्व में है। देखिए प्रमाण—

दो सिन्धु नदी

प्रथम सिन्धु नदी—**नदीं पिबन्ति विपुलां गङ्गां सरस्वतीम्।(9/14)**

द्वितीय सिन्धु नदी—**पवित्रां कुण्डलीं सिन्धु राजनीं पुरमालिनीम्।**

(9/21)

दो सिन्धु प्रदेश

प्रथम सिन्धु प्रदेश—**कश्मीराः सिन्धु सौवीरा गान्धारा दर्शकास्तथा।**
(9/53)

द्वितीय सिन्धु प्रदेश—**चेदि मत्स्य करूणाश्च भोजाः सिन्धु पुलिन्दकाः।**
(9/40)

भारत के पश्चिम सीमा में सिन्धु प्रदेश एवं विश्व विख्यात सिन्धु नदी (वर्तमान पाकिस्तान में) सर्व विदित हैं ही।

महाभारत के इस प्रमाण से ज्ञात होता है कि भारत के पूर्वी क्षेत्र में एक सिन्धु नदी थी। उस समय उस नदी के आसपास के क्षेत्र को सिन्धु प्रदेश भी कहते थे जिसे आगे के प्रमाणों से पुष्ट किया जा रहा है। भारत के पूर्वी क्षेत्र में स्थित सिन्धु प्रदेश का प्रमाण महाभारत के आश्वमेधिक पर्वान्तर्गत अनुगीता पर्व के 78 वें अध्याय में मिलता है। वहाँ इस प्रकार के वृत्तांत का वर्णन है—

अश्वमेघ का घोड़ा प्राग्ज्योतिषपुर के पास पहुँचा जहाँ भगदत्त का पुत्र वज्रदत्त राज्य करता था, उसे अर्जुन ने पराजित किया। तत्पश्चात् वह घोड़ा सिन्धु प्रदेश में गया।

सैन्धवैरभवद् युद्धं ततस्तस्य किरीटिनः।
हतशेषैमहाराज हतानां च सुतैरपि।। (म. भा. 78/1)
तं स्मरन्तो वधं वीराः सिन्धुराजस्य चाहवे।
जयद्रथस्य कौरव्य समरे सव्यसाचिना।। (म. भा. 78/11)

जयद्रथ की पत्नी दुःशला (दुर्योधन की बहिन) के अनुरोध पर अर्जुन सैन्धवों को क्षमा दान दे देता है। सैन्धव प्रदेश से वह अश्व मणिपुर राज्य में प्रवेश करता है।

क्रमेण स हयस्त्वेवं विचरन् पुरुषर्षभः।
मणिपूरपतेर्देशमुपायत सह पाण्डवः।। (म. भा. 78/49)

क्रमशः विचरण करता हुआ वह अश्व, अर्जुन सहित मणिपुर नरेश के राज्य में जा पहुँचा। मणिपुर में अर्जुन का अपने ही पुत्र मणिपुर नरेश बभ्रूवाहन (अर्जुन की पत्नी चित्राङ्गदा से उत्पन्न) से युद्ध हुआ।

वहाँ से वह अश्व समुद्र पर्यन्त सारी पृथ्वी की परिक्रमा करके उस दिशा की ओर मुँह करके लौटा ज़िस ओर हस्तिनापुर था।

स तु वाजी समुद्रान्तां पर्येत्य वसुधामिमाम्।
निवृत्तोऽभिमुखो राजन् येन वारणसाध्वयम्।

(म. भा. 82/1)

महाभारत के इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि जयद्रथ का सिन्धु प्रदेश भारत के पूर्वी क्षेत्र में प्राग्ज्योतिषपुर से आगे तथा मणिपुर के समीप था, संभवतः आज के असम प्रदेश के पूर्वी भाग में। संभव है कि उस समय के इस सिन्धु प्रदेश में आज के ब्रह्मपुत्र नदी को सिन्धु नदी कहते हों, सिन्धु प्रदेश के कारण या ब्रह्मपुत्र नदी की विशालता के कारण। ब्रह्मपुत्र का भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न नाम आज भी है जैसे अखण्ड भारत के पूर्वी बंगाल (आज का बंगलादेश) में ब्रह्मपुत्र को मेघना कहते हैं।

हुएनसांग के संस्मरणों का शिन्तु-हिन्तु, भविष्य पुराण का सिन्धु स्थान से हिन्दुस्थान,सिन्धुजा से हिन्दुजा, के प्रत्यक्ष प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि **सिन्धु** से ही **हिन्दु** बना है जिस सिन्धु का मूल वेद है। लोक में प्रचलित नामों को प्रारंभ में वेद से ही लिया जाता रहा है।

संस्कृत के **सकार** (पदादि अथवा मध्य या अन्त) का **हकार** में परिवर्तित होने की परंपरा वैदिक वाङ्मय, पाणिनीय व्याकरण, प्राकृत, हिन्दी एवं लोकभाषाओं के साथ-साथ असमियाँ भाषा में भी है जिसका उल्लेख विस्तार से पूर्व में किया गया हैं। असम में सिन्धु का उल्लेख किया गया है। अतः असमियाँ में भी सिन्धु का उच्चारण हिन्दु हुआ है।

इन सब प्रमाणों से यह भी सिद्ध हुआ कि भारतीय भाषा परंपरा में ही सिन्धु से हिन्दु हुआ है।

अतः यह हिन्दु शब्द शुद्ध स्वदेशी है। विदेशी नहीं। संस्कृत भाषा के ग्रंथों में हिन्दु शब्द ह्रस्व उकारान्त यानी 'हिन्दु' ही है परन्तु लोकभाषाओं और हिन्दी में यह दीर्घ ऊकारान्त यानी 'हिन्दू' हो गया है जैसे कि संस्कृत में राष्ट्रिय तथा निश्चयबोधात्मक शब्द 'हि' ह्रस्व इकारान्त है, पर लोकभाषाओं और हिन्दी में ये शब्द क्रमशः 'राष्ट्रीय' और 'ही' हो गए हैं।

सिन्धु हिन्दु ही क्यों?

वीर सावरकर अपने ग्रंथ हिन्दुत्व में लिखते हैं—"सिन्धुस्थान नाम वैदिक तो है ही, साथ ही साथ इससे एक विचित्र लाभ भी हुआ है।......संस्कृत भाषा में सिन्धु केवल सिन्धु नदी का ही नाम नहीं है, अपितु महासागर का भी है जो दक्षिण द्वीप कला की मेखला-समुद्र रशना है। इस भाँति केवल इस एक शब्द सिन्धु के उच्चारण मात्र से ही देश की चतुः सीमाओं का बोध हो जाता है।.....पूर्व दिशा में प्रवाहित होने वाली सिन्धु[1] सरिता भी इस सिन्धु (पश्चिमी सिन्धु) की ही एक शाखा[2] है और इस भाँति सिन्धु हिमालय के पूर्वी और पश्चिमी दोनों ढ़लानों पर प्रवाहित होती है, अतः हमारे पश्चिमी सीमा के समान पूर्वी सीमा भी सिन्धु ही है।" (पृ. 33)

---

1. ब्रह्मपुत्र नदी—ले.
2. भारत में लोक मान्यता है कि भारत के पश्चिमी भाग में बहने वाली सिन्धु नदी तथा पूर्व में बहने वाली सिन्धु (ब्रह्मपुत्र) नदी दोनों ही कैलास मानसरोवर क्षेत्र से निकली हैं। वस्तुतः यह लोक मान्यता यथार्थ के बहुत समीप है। ले.

"सिन्धुस्थान" नाम की विशेषताएँ

सिन्धु कहने मात्र से भारत के पश्चिमी सीमा पर बहने वाली सिन्धु नदी एवं प्रदेश तथा पूर्व में स्थित सिन्धु नदी एवं प्रदेश के साथ भारत को प्राय: तीन दिशाओं से घेरे हुए सिन्धु, समुद्र (महासागर) का बोध होता है। सिन्धु के उच्चारण मात्र से भारत के चतु: सीमाओं का बोध होता है। संक्षेप में कहें तो इससे आसेतु हिमालय संपूर्ण भारत का बोध अन्तर्निहित है। अपने में इन्हीं विशेषताओं को समेटे हुए हिन्दु नाम संपूर्ण भारतीयों को अत्यधिक आकर्षक, व्यापक एवं अभिनव प्रतीत हुआ, जिससे भारतीयों की सर्वमान्य सांस्कृतिक एवं भौगोलिक एकता प्रकट होती थी, उस हिन्दूनाम को जनमानस ने अपने में आत्मसात कर लिया। परिणामस्वरूप यह हिन्दू नाम भारतीय जनमानस में अब तक के सभी संबोधनों से लोकप्रिय बन गया।

हिन्दुस्थान

विद्वानों का यह सिद्धान्त है कि देश, काल, परिस्थिति के अनुसार स्वाभाविक रूप से वेश-भूषा, खान-पान, भाषा तथा लोक परम्पराओं में काल क्रम के प्रवाह के साथ परिवर्तन होता हैं, एवं मानव समाज उसे स्वाभाविक रूप से स्वीकार कर लेता है। मानव समाज को उसी से गति प्राप्त होती है। प्राचीन काल में जो था, वे सब बातें वर्तमान में नहीं हैं, और जो सब बातें आजकल हैं, प्राचीन समय में वे सब नहीं थीं। समाज देश, काल, परिस्थिति के अनुसार कुछ पुरानी बातें त्यागता है, तो कुछ नई बातों को ग्रहण भी करता है।

सारे संसार में इस प्रकार का परिवर्तन होता है। सौ, दो सौ वर्ष पूर्व-जर्मनी एवं इटली नामक कोई देश इस धरती पर नहीं था। आज वे हैं।

संसार उनके अस्तित्व को आदर के साथ स्वीकारता है। आज वहाँ के निवासी इन नए नामों को गर्व के साथ बिना किसी संकोच, लज्जा और अपमानबोध, के स्वीकार करते हैं।

किसी काल में भारत के निवासियों का नाम भारती या भारतीय तथा देश का नाम भारतवर्ष था। यह इन प्रमाणों से स्पष्ट होता है—

(*i*) क्षीरो दधेरूतरं यद् हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
ज्ञेयं तद् भारतवर्षं सर्व कर्म फल प्रदम्॥

(*ii*) उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वंर्षं तद् भारतं नाम नव साहस्त्र विस्तृतम्।। (अग्नि. पु.)

(*iii*) उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमवद् दक्षिणं च यत्।
वंर्ष तद् भारतं नाम यत्रेयं भारती प्रजा।। (वायु. पु 45.75)

(*iv*) उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वंर्ष तद् भारतं नाम भारती यत्र संतति।। (विष्णु पु. 2.3.1)

वर्तमान में भारत के निवासियों का नाम हिन्दू है। इनके देश को भी हिन्दुस्थान कहते हैं। पूर्व के जिन श्लोकों में भारतवर्ष की जो भौगोलिक सीमाएं बताई गईं हैं वही हिन्दुस्थान की भी है—बृहस्पति आगम के इस श्लोक से भी यही सिद्ध होता है।

हिमालय समारभ्य यावद् इन्दु सरोवरम्।
तं देव निर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्षते।।

अर्थात् हिमालय पर्वत से लेकर इन्दु (हिन्द) महासागर तक देवपुरुषों द्वारा निर्मित इस क्षेत्र को 'हिन्दुस्थान' कहते हैं। इन सब बातों से ज्ञात होता है कि भारत-भारती एवं हिन्दु-हिन्दुस्थान पर्यायवाची हैं।

हिन्दु एवं हिन्दुस्थान नाम सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से बड़ा ही भव्य था। इसमें आसेतु हिमालय समस्त देश का अन्तर्भाव निहित था। इसलिए हमारे महान् आचार्यों ने जब संपूर्ण राष्ट्र को संगठित किया तब

हिन्दु और हिन्दुस्थान नाम दिया। अपनी व्यापकता एवं प्रासंगिकता के कारण ही यह शब्द हमारी जाति के रक्त में बस गया। हिन्दु नाम को अपने रक्त एवं श्वासों में बैठा दिया जिसे हमारे हुतात्माओं ने सैंकड़ों वर्षों के युद्ध के हवन कुण्ड में अपना सर्वस्व अर्पण कर इसे दृढ़ बना दिया।

हिन्दू शब्द के अन्दर निहित गुरुत्वाकर्षण शक्ति एवं प्रेरणा को सावरकर जी ने इन शब्दों में व्यक्त किया है।

हिन्दू नाम से प्रेरणा

''वह हिन्दू नाम जो हमारी जाति तथा देश को हमारे महान् पूर्वजों ने प्रदान किया है, जिसका उल्लेख विश्व के सबसे अधिक प्राचीन और पूज्य ग्रंथ वेदों में भी प्राप्य है। जिस नाम से कश्मीर से कन्याकुमारी तक, अटक से कटक पर्यन्त हमारे समग्र देश की अभिव्यक्ति होती है; जो नाम एक ही शब्द में हमारी जाति और देश की भौगोलिक स्थिति की सुस्पष्ट कर देता है, जो नाम हमारी विशिष्टता और श्रेष्ठता का परिचायक ''राष्ट्रमार्यस्य चोत्तमम्'' का दिग्दर्शक माना गया, उस नाम का कोई कैसे परित्याग कर सकता है?

जिस नाम के लिए हमारे शत्रु हमारा तिरस्कार करते थे और जिसके लिए शालिवाहन से शिवाजी-पर्यन्त हमारी जाति के महान् पराक्रमी योद्धा शताब्दियों तक सतत संघर्ष करते रहे, वह यही नाम है हिन्दु।

वह हिन्दु नाम ही पद्मिनी और चित्तौड़ की चिताभस्म में अंकित है। यह हिन्दु नाम ही तुलसीदास, तुकाराम, रामकृष्ण ओर रामदास ने अपनाया था। हिन्दु पद पादशाही की स्थापना ही समर्थ गुरुरामदास का सद्स्वप्न था। यही शिवाजी का पावन व्रत था। बाजीराव और

वीर बन्दा बैरागी, छत्रसाल और नाना साहब, प्रताप और प्रतापादित्य की आकांक्षाओं का यही ध्रुवतारा था।''

''यही नाम उस पवित्र पताका पर अंकित था जिसकी रक्षार्थ एक-एक दिन में एक-एक लाख हिन्दू वीर शत्रुओं का संहार करते-करते पानीपत के समरांगण में सर्वदा के लिए सुख की नींद सो गये थे और उनके अग्रभाग में वीराग्रणी भाऊ भी अपने हाथों में खड्ग सँभाले असिधारा तीर्थ में निमज्जित हुए थे। इस बलिदान के उपरान्त भी नाना साहब और महादजी इसी हिन्दू पद पादशाही की स्थापनार्थ अन्धड़ों और तूफानों की चिन्ता न करते हुए राष्ट्रतरणी को तट तक खेकर ले जाने में सफल सिद्ध हुए।''

''आज भी यही हिन्दू और हिन्दुस्थान नाम नेपाल के राजसिंहासन से लेकर मार्ग में झोली लेकर भिक्षाटन करने वाले भिक्षुक तक की वाणी से गुंजित हो रहा है और यही पावन नाम कोटि-कोटि मानवों के अन्तस्थल को आन्दोलित कर रहा है।''

''इस नाम का तिरस्कार करना अपनी महान जाति के हृदयस्थ को ही काटकर फेंक देने के ही तुल्य सिद्ध होगा। ऐसा करते ही काल का कराल गाल हमें अपने आप में समेट लेगा।

अतः इस नाम का परित्याग करना आत्महत्या की सिद्धता के तुल्य है। हिन्दू और हिन्दुस्थान इन पावन नामों को अपने आप से पृथक् करने का विचार हिमगिरि को ही उसके अधिष्ठान से डिगाने के तुल्य है।'' (हिन्दुत्व, पृ. 66-67)

4.

अवेस्ता, फ़ारसी एवं अरबी भाषा में हिन्दू शब्द

"**अवेस्ता**" पारसियों का उपलब्ध सबसे प्राचीनतम धर्मग्रंथ एवं साहित्य है। सभी देशी एवं विदेशी विद्वानों द्वारा हमें अब तक यही बताया जाता रहा है कि पारसियों के धर्म ग्रंथ अवेस्ता में वैदिक संस्कृत शब्दों के '**सकार**' का उच्चारण "**हकार**" होता है, तथा वर्ग के चतुर्थ वर्ण के स्थान पर तृतीय वर्ण अर्थात् "धकार" के स्थान पर "दकार" होकर **वैदिक सिन्धु** शब्द से अवेस्ता में **हिन्दू** बन गया है। उदाहरण स्वरूप बहुत से शब्दों को प्रस्तुत करते हैं। यहाँ उनमें से एक दो शब्दों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

वैदिक संस्कृत	**अवेस्ता**
सोम	होम
असुर	अहुर

ऐसे अनेक शब्द हैं। सबको यहाँ लिखना अनावश्यक होगा।

अवेस्ता में हिन्दू शब्द

अवेस्ता में 'हिन्दू' शब्द की खोज को लेकर हमने स्वयं अवेस्ता का अध्ययन किया, तथा अवेस्ता के अनेक विद्वानों से विचार विनिमय किया। उनमें से कई परंपरागत पारसी समुदाय के प्रसिद्ध अवेस्ता के ज्ञाता थे। लेकिन आश्चर्य तब हुआ जब यह ज्ञात हुआ कि **अवेस्ता में "हिन्दु" या "सिन्धु" शब्द ही नहीं है।** अवेस्ता के समकालीन पारसी लोग भारत को हिन्दू या हिन्दुस्तान के रूप में जानते ही नहीं थे अपितु **इतना अवश्य है कि अवेस्ता में आर्यन शब्द आया है।** सबसे आश्चर्य यह होता है कि

अनेक लेखकों ने अवेस्ता में **हिन्दु** शब्द की विद्यमानता के कोई **प्रमाण** न देते हुए भी, हिन्दु शब्द के मूल एवं उत्पत्ति को ईरानियो से जोड़ दिया है। **अतः यह विचार निराधार है कि हिन्दु शब्द अवेस्ता में सबसे पहले आया है या यह शब्द अवेस्ता के कारण ईरानियों की देन है।**

पारसियों के साहित्य में सबसे पहले '**हिन्दु**' शब्द ''हप्त हिन्दू'' के रूप में ''**वेंदिदाद**'' नामक ग्रंथ में आया है। अवेस्ता के विद्वानों का मत है कि यह अवेस्ता की तुलना में बहुत अर्वाचीन है, इसका काल ईसा के समीप है।

पारसियों के एक अन्य ग्रंथ ''शातीर'' का एक रोचक प्रसंग इस प्रकार है—

''अकनूं बिरहमने व्यास नाम आज हिन्द आमद बस दाना कि कल चुना नस्त''

भावार्थ—''व्यास नामक एक ब्राह्मण हिन्द से आया जिसके बराबर कोई दूसरा अक्लमंद न था।''

''चू व्यास हिन्दी बलख आमद, गस्तास्प जरदुस्त रावं खवान्त''

भावार्थ—''जब हिन्द वाला व्यास बलख में आया, तब पारस के बादशाह गस्तास्प ने जरदुस्त को बुलवाया।''

शातीर के प्रमाण से यह स्पष्ट है कि पुरातन फ़ारसी भाषा में हिन्दी' तथा 'हिन्द' शब्द विकृत अर्थों में प्रयुक्त नहीं होता था, अपितु यह गौरवशाली रूप में पहचाना जाता था।

फ़ारसी भाषा में हिन्दू शब्द

फ़ारसी भाषा, वर्तमान ईरान की भाषा है। फ़ारसी भाषा का मूल स्थान भी ईरान है। अतः फ़ारसी भाषा के मूल उत्पत्ति स्थान ईरान में वहाँ के विद्वानों द्वारा बनाये गए प्रामाणिक कोशों में हिन्दू शब्द का अर्थ

देखना उपयोगी होगा। फारसी भाषा के विद्वानों के मध्य "**फरहंग ए अमीद**" शब्दकोश बहुत ही आदरणीय है जिसके संग्रहकर्त्ता ईरान देश निवासी श्रीमान् हसन अमीद हैं जो अपने कोश में हिन्दू विषय पर लिखते हैं—

हिन्दू—यह पहलवी[1] भाषा के 'हिन्दूक' शब्द से फ़ारसी भाषा में आया है।

हिन्दी, अहले हिन्द (हिन्द देश निवासी) व तफाये अज़ मरदुमे हिन्द (हिन्दुस्तान का धर्म) मख़सूसी दरन्द—(विशिष्ट धर्म)

अन्य परम्परागत कोशों को देखने पर 'हिन्दू' का इस प्रकार का अर्थ मिला—

हिन्दू = प्राचीन हिन्द के रीति-रिवाजों को मानने वाले, हिन्दुस्तान का बाशिन्दा, लड़कियों के गालों पर सुन्दरता के परिचायक के रूप में होने वाला काला तिल, लड़कियों का दिल जीतने (चुराने) वाला उनका प्रेमी एवं घी क्वॉर का पौधा।

इन प्रमाणों से ज्ञात होता है कि हिन्दू शब्द का प्रयोग प्रसंगानुकूल विभिन्न अर्थों में मिलता है यथा संस्कृत में एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं जैसे सैन्धव का अर्थ घोड़ा एवं नमक होता है। इन प्रमाणों से यह स्पष्ट हो गया कि फ़ारसी भाषा में भी हिन्दू शब्द का प्रयोग आदरपूर्वक व गरिमामय अर्थों में होता है। प्रमाणों के इस आलोक में, हिन्दू शब्द विरोधी विद्वानों के मिथ्या प्रचार की कलई खुल जाती है।

अरबी भाषा में हिन्दू शब्द

इस्लाम के प्रवर्तक पैगम्बर मुहम्मद से 1700 वर्ष पूर्व अर्थात् आज

---

1. पहलवी भाषा-फारसी से प्राचीन ईराक की भाषा है—ले.

से 3100 सौ वर्ष पूर्व हुए प्रसिद्ध कवि , लबि बिन अखतब बिना तुर्फा के कविताओं का संकलन अब्बासी खलीफा हारुन रशीद (788-808 ई. पू.) के दरबारी कवि अस्माई मलेकुस शरा ने किया था। उस कविता में कवि ने भारत तथा वेदों की प्रशंसा की है। वह इस प्रकार है—

अया मुबारकेल अरज यू शैये नोहा मिलन "हिन्दे"।
व अरादकल्लाहः मञ्योनञ्जेल ज़िकरतुन ॥1॥
वहल तजल्लीयतुन एनाने सहबी अख़अतुन ज़िकरा।
वराजे ही योनञ्जेलुरसुल मिलन हिंदतुन ॥2॥
यकूलुनल्लाहः या अहलल अरज आलमीन कुल्लहुम।
फतबेऊ जिकरतुल "वेद" हककुन मालम योबञ्जेलतुन ॥3॥
व हौवा आलममुस्साम वल 'यजुर' मेल्लादे वन जीलन।
फऐनोमा या अरबीयों मुतवेअन यो वशशेरी यो नजातुन ॥4॥
व इसनैन हुमा "रिक अतर" तासिहीन कः अखवतुम।
व असनात अला ऊदन बहोबा मशएरतुन ॥5॥

भावार्थ—हे हिन्द की पुण्यभूमि! तू धन्य है, क्योंकि ईश्वर ने अपने ज्ञान के लिए तुझको चुना।।1॥

वह ईश्वर का ज्ञान प्रकाश जो चार प्रकाश स्तम्भों के सदृश सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित करता है, हिन्द के ऋषियों द्वारा चार वेदों के रूप में प्रकट हुआ।। 2॥

और परमात्मा समस्त संसार के मनुष्यों को आज्ञा देता है कि वेद जो मेरे ज्ञान है, इसके अनुसार आचरण करो।। 3॥

वह ज्ञान के भण्डार साम (वेद) और यजु (वेद) हैं जो ईश्वर के प्रदान किये हुए हैं। इसलिए हे मेरे भाइयो! इनको मानो क्योंकि यह हमें मोक्ष का मार्ग बताते हैं।। 4॥

और दो उनमें से 'रिक और अतर' (ऋक और अथर्व) हैं जो हमको भ्रातृत्व की शिक्षा देते हैं जो इनके प्रकाश में आ गया, वह कभी अन्धकार को प्राप्त नहीं होता है ॥ 5॥

अरबी भाषा में हिन्दू शब्द का अर्थ—अरबी भाषा के अति प्रामाणिक-शब्द कोश, **(1) लिसान उल अरब**—संग्रहकर्ता—इब्न मंजूर, **(2) अल मिसबाह उल मुनीर**—संग्रहकर्ता—फूयेमि, के अध्ययन करने पर हिन्दू शब्द का जो अर्थ ज्ञात हुआ वह इस प्रकार है—

हिन्दूसी—(बहुवचन)—हिन्दुस्तान का वाशिन्दा, हिन्दू धर्म का अनुयायी।

अल हिन्द—भारत (अरबी में आदरणीय शब्दों के साथ 'अल' का प्रयोग करते हैं)

हिन्द—सुन्दर, लड़कियों के नाम।

उदाहरण के लिए—(1) हजरत मुहम्मद साहब की पहली पत्नी खदीजा थी। उनके पहले पति अतिक-बिन-ऐजाद से उनको दो सन्तानें हुई जिनमें लड़की का नाम **हिन्द** एवं लड़के का नाम अब्दुल्ला था।

(2) अबू सूफियाँ (मुहम्मद साहब का भतीजा) की पत्नी का नाम **हिन्द** था, जो पैगम्बर मुआबिआह की माँ थी।

अरब में हिन्द नाम आज भी इतना प्रसिद्ध है कि लड़कियों के नाम तो हिन्द रखते ही हैं। सुन्दर लड़कों को भी हिन्द नाम रखते हैं।पूर्वोक्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि **अरबी भाषा में भी हिन्दू शब्द का प्रयोग बड़े ही आदर के साथ गरिमामय अर्थों में होता है।**

5. भारत के जन साहित्य में हिन्दू शब्द

हमारे साधु, संत, मुनि, कवि, योद्धा और शूरवीरों ने हिन्दू नाम को आदर, वीरता, स्वाभिमान एवं गर्व के साथ अपनाया है उसके कुछ प्रमाण यहाँ दिए जा रहे हैं।

1. **एहि हिन्दुग देसे वच्चावो** (''निशीथ चूर्ण'' जैन आगम
रचनाकाल-733 वि.सं.)

2. महाकवि वेन— **अटल ठाट महिपाट, अटल तारागढ़धानं।**
अटल नग्र अजमेर, अटल हिन्दव अस्थानं॥

3. महाकवि चन्द वरदाई—'**जब हिन्दू दल जोर हुये छुटी मीरधर भ्रम।**'

4. कवि वीर पृथ्वीराज बीकानेरी महाराणा प्रताप को पत्र में लिखते हैं—'**हिन्दूपति परताप पत राखो हिन्दवान की।**'

5. महाराणा प्रताप द्वारा अकबर को पत्र में '**तुरक कहसि मुख हिन्दवो, इन तु सुन इकलिंग।**'

6. '**हिन्दू सालाही सलाहा (श्लाघनीय) दरसन रूप अपार**' (आदि गुरु ग्रंथ साहिब)

7. समर्थ गुरुरामदास—'**बुडावले सर्व ही पापी। हिन्दुस्तान बकावले।**'

8. शिवाजी द्वारा मिर्जा जयसिह को पत्र—''**मी हिन्दू रजपूत च तेह्वां हिन्दूच राज्य मूलचें हिन्दचेंच हिन्दूधर्म रक्षका पुढ़े मी डोंके शतढा नमवीन परन्तु हिन्दूधर्माची मान हानि होईल असे कधीं ही धडणार नाहीं।**''

9. शिवाजी द्वारा महाराज छत्रसाल को संबोधन—''**हिन्दूपत महाराज तुम, हो क्षत्रिय सिरताज।**''

10. महाकवि भूषण—

राखी हिन्दुवानी हिन्दवान के तिलक राख्यो।
स्मृति पुराण राख्यौ वेद विधि मुनि में।।

11. पाल कवि— **हिन्दू तुरक दीन द्वै गाए।**
तिनको वैर सदा चलि आए।।
जब ते शाह तख्त पर बैठे।
तब सौ हिन्दुन सो उर ठाठे।।

12. कवि सुजान सिह—**हिन्दू धर्म जगाई चलाऔ।**
दौर दिलिदल हलनि चलाओ॥

13. गुरु तेगबहादुर—"**उत्तर मन्यो धर्म हम हिन्दू**
अति प्रिय किमि करे निकन्दू।" (सूर्य प्रकाश)

14. गुरु गोविन्द सिंह—"**सकल जगत में खालसा पंथ गाजे।**
जगे धर्म हिन्दू सकल भंड भाजे।।"
(दशम ग्रंथ)

15. संत कबीर—**सुन्नत किये तुरक जो होवें औरत का क्या करिये।**
अर्ध शरीरी नारी का छोड़िये ताते हिन्दू हो रहिये।।

अन्य बहुत से प्रमाण हैं। स्वातन्त्र्य वीर सावरकर रचित 'हिन्दुत्व' ग्रंथ में पढ़ें।। इस प्रकार हिन्दू शब्द जन सामान्य की भाषा का व्यावहारिक शब्द हो गया।

6. महापुरुषों एवं विद्वानों की दृष्टि में हिन्दू

हिन्दुत्व की दृष्टि से अनेक राष्ट्र निर्माताओं, विद्वानों एवं देशभक्तों ने महान कार्य किया है जिनमें से स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, योगी श्री अरविन्द, डॉ. हेडगेवार, वीर सावरकर, भाई परमानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. सातवलेकर आदि मुख्य हैं। इन महापुरुषों द्वारा स्थापित संस्थाएं जैसे आर्यसमाज, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, हिन्दू महासभा, विश्व हिन्दू परिषद आदि, हिन्दुत्व को और भी अधिक प्रभावी बनाने का कार्य कर रही हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती (1824-1883)

महर्षि दयानन्द जी उन असाधारण महापुरुषों में से थे जिन्होंने अपना सर्वस्व अर्पण कर, हिन्दू जाति में समाई जड़ता को तोड़ पुनर्जागरण का शंखनाद किया। उनके जीवन चरित्र के पढ़ने से ज्ञात होता है कि, उस समय वे जहाँ भी जाते, समाचार पत्र उन्हें हिन्दू जाति के नवजागरण के अग्रदूत के रूप में वर्णन करते थे। हिन्दू समाज पर जब चतुर्दिक आक्रमण हो रहा था, हिन्दू समाज किंकर्त्तव्यविमूढ़ता को प्राप्त हो गया था, उस समय स्वामी दयानन्द के कार्यों के परिणामस्वरूप हिन्दू समाज अपने पुराने आक्रामक मुद्रा में वापस आ गया था। स्वामी दयानन्द के इन योगदानों के प्रति हिन्दू समाज उनका सदैव ऋणी रहेगा।

स्वामी जी के जीवन वृत्तों के पढ़ने से यह भी ज्ञात होता है कि उनके विचारों का शनैः शनैः उत्तरोत्तर परिमार्जन होता गया है। अपने उत्तरोत्तर परिमार्जन क्रम में पूर्व के अपने जिन विचारों को वे ठीक नहीं समझते थे,

उनका पुनः व्यवहार भी नहीं करते थे। जैसा कि उन्होंने स्वकथित आत्मचरित्र में कहा है कि—"वहाँ से आगे मैं जयपुर को गया, वहाँ एक हरिश्चन्द्र विद्वान पंडित था। वहाँ मैंने प्रथम वैष्णव मत का खण्डन कर शैव मत की स्थापना किया। इससे शैव मत का विस्तार हुआ और सहस्त्रों रुद्राक्ष मालाएँ मैंने स्वयं अपने हाथों से दीं, वहाँ शैव मत इतना पक्का हो गया कि हाथी, घोड़े आदि सबके गले में रुद्राक्ष की मालाएँ पड़ गईं।"

यह सर्वविदित है कि इसके पश्चात् स्वामी जी ने शैव मत का भी खण्डन किया। पं. लेखराम लिखित 'स्वामी दयानन्द चरित' (पृष्ठ 59) में स्वामी जी के जयपुर प्रवास का वर्णन करते हुए पं. गोपीनाथ का स्वामी दयानन्द से सम्बन्धित संस्मरण दिया हुआ है जो इस प्रकार है—"उन दिनों वह (स्वामी दयानन्द) रुद्राक्ष का कण्डा (माला) पहनते एवं भभूत लगाते थे।"

यह भी सर्व विदित है कि पश्चात् स्वामी जी ने इसका भी तीव्र खण्डन किया। अब इनसे कोई यह अभिप्राय निकाले की स्वामी दयानन्द जी शैव मतावलम्बी थे, रुद्राक्ष का कण्ठा धारण करते एवं भभूत लगाते थे और उसे वे ठीक मानते थे, तब तो यह स्वामी दयानन्द जी के साथ सर्वथा अन्याय होगा। ठीक इसी प्रकार से स्वामी दयानन्द जी अपने धर्म प्रचारक जीवन के प्रारंभिक काल 1875 में पूना में 15 प्रवचन दिए जो पूना प्रवचन (उपदेश मंजरी) के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसमें इन्होंने 'हिन्दू' शब्द का विरोध चौथे एवं आठवें प्रवचन में किया है। वहाँ विरोध स्वरूप अपना तर्क भी प्रस्तुत किया है कि यह नाम मुसलमानों का दिया है, इसका अर्थ काला, काफ़िर, चोर है, हमें इसे त्यागना चाहिए। यहाँ पर स्वामी जी द्वारा व्यक्त यह विचार मुसलमानों द्वारा उस समय फैलाए गये भ्रम के प्रभाव के कारण ही भावुकतावश प्रकट किया गया था।

उनके जीवन वृत्तों के पढ़ने से यह ज्ञात होता है कि उन्होंने तब तक फ़ारसी व अरबी भाषा के साहित्य का गंभीर अध्ययन नहीं किया था। लोक में मुसलमानों के दुष्प्रचार के कारण ही हिन्दू शब्द के सम्बन्ध में ऐसा कहा था। स्वामी जी के पूना प्रवचन में व्यक्त विचारों को लेकर उनके कुछ भ्रमित अनुयायी महोदय 'हिन्दू' शब्द के विषय में बिना किसी प्रकार के गंभीर अध्ययन के दुष्प्रचार करने लगते हैं। दुर्भाग्य है कि कुछ लोग विश्वास भी करने लगते हैं। वस्तुतः इस प्रकार का दुष्प्रचार करने वाले महाशय लोग स्वामी जी द्वारा 1875 के पश्चात प्रयुक्त हिन्दू शब्द पर ध्यान नहीं देते हैं। मैं पाठकों के समक्ष उन्हें यहाँ क्रम से प्रस्तुत कर रहा हूँ।

लेखराम[1] (पृ. 307) 4 फरवरी 1877 को मेरठ से चलकर स्वामी दयानन्द जी सहारनपुर आए। अम्बहटा निवासी, मुंशी चंडी प्रसाद के प्रश्नों का उत्तर देते हुए।

स्वामी दयानन्द—"उस समय 'हिन्दू' विवश थे इस कारण उनमें सामना करने का सामर्थ्य न था।"

लेखराम (पृ. 364)—जुलाई 1877 अमृतसर के कमिश्नर एच. परकिंस के प्रश्नों का उत्तर देते हुए—

एच. परकिंस—"हिन्दू धर्म सूत के धागों के समान कच्चा क्यों है?"

स्वामी दयानन्द—"यह धर्म सूत के धागे के समान कच्चा नहीं, अपितु लोहे के समान पक्का है। लोहा टूट जाए तो टूट जाए परन्तु यह कभी टूटने में नहीं आता।"

---

1. ऋषि दयानन्द चरित्र—ले. पं. लेखराम, प्रकाशक—आर्य समाज नया बॉस, दिल्ली-11006

एच. परकिंस—"आप कोई उदाहरण दें तो हमें विश्वास आए।"

स्वामी दयानन्द—"हिन्दू धर्म समुद्र के गुण रखता है; जिस प्रकार समुद्र में असंख्य लहरें उठती हैं, उसी प्रकार इस धर्म में देखिए। ऐसे लोगों का भी मत है जो छानकर पानी पीते हैं—एक मत ऐसे लोगों का भी है जो दुग्धाहारी हैं। एक मत ऐसे लोगों का भी है जो जीवन भर यति रहते हैं। एक मन ऐसे लोगों का भी है जो निराकार परमात्मा को ही पूजते हैं;....। फिर एक मत ऐसे लोगों का भी है जो अवतारों की पूजा करते हैं। एक मत ऐसे लोगों का है, जो केवल ज्ञानी हैं। एक मत ऐसा है जो केवल ध्यानी है। एक मत उनका भी है जो शूद्रों के हाथ से पानी पीते हैं और इनसे भोजन बनवाकर खाते हैं। इतना होने पर भी यह सबके सब हिन्दू कहलाते हैं, और वास्तव में हैं भी हिन्दू ही। कोई इनको हिन्दू धर्म से निकाल नहीं सकता। इसलिए यह समझना चाहिए कि यह धर्म अत्यन्त पक्का है, कच्चा नहीं।"

इन पंक्तियों में स्वामी जी ने हिन्दुत्व को परिभाषित करते हुए उसकी विशालता, व्यापकता तथा उसके गाम्भीर्य की कितनी सरल और सहज व्याख्या की है जो आसानी से समझ में आ जाता है। इसीलिए दयानन्द के अनुयायी लेखकों ने भी 'हिन्दू' शब्द को अपनाया।

लेखराम—(पृ. 376) अगस्त 1877

स्वामी दयानन्द—"मुसलमान, **हिन्दुओं** से बड़े बुतपरस्त हैं।"

लेखराम—(पृ. 385) : नवम्बर 1877, रावलपिंडी, स्वामी जी विशेष व्यक्तियों से बातचीत करते हुए।

स्वामी जी—"**हमें हिन्दुओं की दशा पर अत्यन्त खेद है। कि वे अन्य मत की पुस्तक नहीं देखते** और मेलों में उनसे जब कोई पादरी या मौलवी उनको कहता है कि ब्रह्मा जी....झूठ सच मान लेते हैं। ब्रह्मा जी

की बात किसी विश्वसनीय ग्रंथ में नहीं है। परन्तु बाइबिल में लूत पैगम्बर का अपनी बेटियों से व्यभिचार का वर्णन है।''

लेखराम—(पृ. 539) दानापुर नवम्बर 1879 : मिस्टर जोन्स ने स्वामी जी से पूछा—

मि. जोन्स—''हिन्दू लोग मूर्ति पूजा क्यों करते हैं ?''

स्वामी दयानन्द—''यह मूर्ति पूजा हिन्दुओं का धर्म नहीं है क्योंकि उनके सत्य शास्त्रों में इसका वर्णन नहीं है।''

लेखराम—(पृ. 912) मई से अक्टूबर के बीच 1883 जोधपुर।

स्वामी जी—''हिन्दू राजाओं की सत्ता केवल उनकी रानियों के पतिव्रत धर्म पर आधारित है।''

इन सब उदाहरणों में स्वामी दयानन्द जी देशी एवं विदेशी सभी महानुभावों के साथ वार्तालाप में हिन्दू शब्द का प्रयोग निःसंकोच करते हैं।

पाठक यह भली भाँति समझ गए होंगे कि स्वामी दयानन्द अपने प्रारंभिक प्रचारक जीवन के पश्चात अपने जीवन के अन्त तक निःसंकोच हिन्दू शब्द का प्रयोग करते हैं। प्रायः सभी महापुरुषों के चिंतन में उत्तरोत्तर परिमार्जन होता ही रहता है और वे उसी के अनुसार अपने मन्तव्यों का परिमार्जन करते रहते हैं। विद्वत् परंपरा है कि आचार्यों का परवर्ती विचार ही प्रामाणिक होता है। आचार्यों के अभिप्रायों को समझने हेतु गहन चिंतन की आवश्यकता होती है। एक उद्धरण व्याकरण महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि के महाभाष्य का है, जो व्याकरण विषयक होने पर भी अपने आप में व्यापक अर्थ को लिए हुए है, अतः प्रासंगिक होने से यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

इहेङ्गितेनङितेन चेष्टितेन निमिषितेन महता वा
सूत्र निबन्धनेन आचार्याणाम् अभिप्रायो लक्ष्यते।।

भावार्थ—आचार्यों के द्वारा सूत्र रूप में किए गए निर्देशों से भी महान अभिप्राय लक्ष्य होता है।

स्वामी विवेकानन्द (1836-1902)

हिन्दू धर्म के मूल तत्त्वों को प्रसारित करने में स्वामी विवेकानन्द का अभूतपूर्व योगदान रहा है। एक ओर जहाँ इन्होंने हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में सरल, प्रामाणिक, प्रेरणादायक स्वरूप में प्रस्तुत किया है, वहाँ युवकों को इसकी रक्षा के लिए संगठित होकर परम वैभव तक पहुँचाने का आह्वान भी किया है। स्वामी जी के अनुसार हिन्दू धर्म के सभी सम्प्रदायों का मूल मान स्रोत वेद और उपनिषद् हैं। वे कहते हैं—

''हम हिन्दुओं के मतानुसार वेद अनादि और अनन्त हैं.....वेदों का कोई दूसरा प्रमाण नहीं है, वेद स्वतः प्रमाण हैं क्योंकि वेद अनादि व अनन्त हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान राशि हैं। (हिन्दू धर्म, पृ. 27)

''भारत के सभी संप्रदायों द्वैतवादी, विशिष्टाद्वैतवादी अद्वैतवादी अथवा सौर, शाक्त, गाणपत्य, शैव, वैष्णव जो कोई हिन्दू धर्म के भीतर रहना चाहे उसको वेदों तथा उसके अंश उपनिषदों को मानना ही पड़ेगा। ....हिन्दू धर्म की चाहे जितनी शाखा-प्रशाखाएँ हों, उनमें से कुछ चाहे कितनी विसदृश क्यों न दिखाई देती हों, उनके उद्देश्य चाहे कितने जटिल क्यों न प्रतीत हों, जो कोई उनकी अच्छी प्रकार से छानबीन करेगा, वही समझेगा कि उनके भाव उपनिषदों से लिए गए हैं।'' (वही, पृ. 28)

''यद्यपि मैं हिन्दू जाति का नगण्य व्यक्ति हूँ तथापि अपनी जाति और पूर्वजों के गौरव में मैं अपना गौरव मानता हूँ। अपने को हिन्दू बताते और हिन्दू कहकर अपना परिचय देते हुए मुझे एक प्रकार का गर्व-सा होता है।'' (वही, पृ. 97/98)

''जब हिन्दू की सुषुप्त आत्मा सक्रियता के साथ स्वतः प्रेरित होकर

जाग उठेगी तो हिन्दू को शक्ति मिलेगी, यश मिलेगा, श्रेष्ठता मिलेगी, पवित्रता मिलेगी और प्रत्येक अभीष्ट पदार्थ की प्राप्ति होगी।''

स्वामी विवेकानन्द घोषणा करते हुए कहते हैं कि **''संसार की किसी भी भाषा में इससे अच्छा शब्द नहीं है। अतः मुझे गर्व है कि मैं हिन्दू हूँ। तुम भी अपने आपको गर्व से कहो कि हम हिन्दू हैं।''**

योगी श्री अरविन्द (1872-1950)

महान योगी श्री अरविन्द ने हिन्दू और हिन्दू धर्म सम्बन्धी विचार अपनी सशक्त लेखनी से न केवल सुस्पष्ट किया है, बल्कि हिन्दू के भविष्य के लिए आक्रामक स्वरूप अपनाने पर भी बल दिया है। वे कहते हैं—

''पर हिन्दू धर्म है क्या? यह कौन-सा धर्म है जिसे हम सनातन या शाश्वत कह कर पुकारते हैं? इसे हिन्दू धर्म इसलिए कहते हैं क्योंकि इसे हिन्दू राष्ट्र ने सुरक्षित रखा, क्योंकि सागर और हिमालय के एकांत में इस प्रायद्वीप में इसका विकास हुआ, क्योंकि इस पुनीत और पुरातन भूमि में इसका भार आर्य जाति को उसे युग-युगांतर तक सुरक्षित रखने के लिए सौंपा गया था। किंतु वह किसी एक देश की सीमाओं से परिसीमित नहीं है; वह विश्व के किसी सीमित भाग की विशिष्ट और निरंतर संपत्ति नहीं है।

जिसे हम हिन्दू धर्म कहते हैं, यह वास्तव में सनातन धर्म है क्योंकि वह सार्वभौम धर्म है, जो अन्य सभी को अपने में समाहित कर लेता है। यदि कोई धर्म सार्वभौम नहीं है, तो वह सनातन नहीं हो सकता। एक संकीर्ण धर्म, एक सांप्रदायिक धर्म, एक एकनिष्ठ धर्म, एक सीमित समय और सीमित उद्देश्य के लिए ही जीवित रह सकता है। सनातन धर्म ही एक ऐसा धर्म है जो विज्ञान के आविष्कारों और दर्शन के चिंतनों का

पूर्वानुमान करके और उन्हें आत्मसात् करके भौतिकवाद के ऊपर विजय प्राप्त कर सकता है। वह अकेला एक ऐसा धर्म है जो हमारे प्रति ईश्वर की निकटता पर बल देकर मानवता को बताता है और अपने में उन सभी संभव साधनों को संजोये है जिनके द्वारा मनुष्य ईश्वर के समीप जा सकता है।

वही एक ऐसा धर्म है जो सभी धर्मों द्वारा स्वीकृत इस सत्य पर प्रतिक्षण ज़ोर देता है कि ईश्वर सभी मनुष्यों और चराचर वस्तुओं में विद्यमान है, उसी में हम चलते, फिरते और वास करते हैं। केवल यही धर्म हमें इस सत्य को समझने और उस पर विश्वास करने में न केवल सहायता करता है बल्कि अपने अस्तित्व के हर भाग से उसका एहसास कराता है। यही एक धर्म विश्व को बताता है कि यह संसार है क्या, कि वह वासुदेव की ही एक लीला है।

यही धर्म है जो हमें बताता है कि उस लीला में, उसके सूक्ष्मतम विधानों में, उसके उत्कृष्टतम नियमों में हम अच्छी तरह अपनी भूमिका कैसे निभा सकते हैं। यही एक धर्म है जो छोटे से छोटे ब्यौरे में भी जीवन को धर्म से अलग नहीं करता, जो यह जानता है कि अमरत्व क्या है और जिनसे हमसे मृत्यु की विभीषिका को बिल्कुल दूर हटा दिया है.....।

मैंने कहा था (पिछले वर्ष) कि यह आन्दोलन एक राजनैतिक आंदोलन नहीं है, और राष्ट्रवाद, राजनीति नहीं बल्कि एक धर्म है, एक सिद्धांत है, एक विश्वास है। मैं फिर आज उसे दोहराता हूँ, पर उसे दूसरी तरह प्रस्तुत करता हूँ। मैं अब यह नहीं कहता कि राष्ट्रवाद एक सिद्धांत है, एक धर्म है, एक विश्वास है, मैं कहता हूँ यह सनातन धर्म है, जो हमारे लिए राष्ट्रवाद है।......सनातन धर्म ही राष्ट्रवाद है। यही वह संदेश है, जो मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ।'' (30 मई 1909, भारत का पुनर्जन्म, पृ. 50-51)।

''उस धार्मिक संस्कृति ने, जिसे हिन्दुत्व के नाम से जाना जाता है,

अपना स्वयं कोई नाम नहीं रखा, क्योंकि उसने अपनी कोई सांप्रदायिक सीमाएँ नहीं बाँधी; उसने सार्वभौम निष्ठा का दावा नहीं किया, एकमात्र अमोघ धर्मसिद्धांत का हठ नहीं किया, मोक्ष की कोई अकेली संकरी राह अथवा द्वार नहीं स्थापित किया; वह एक धर्मसिद्धांत अथवा पंथ कम, ईश्वरोन्मुख मानव आत्मा के प्रयास की निरन्तर बढ़ती हुई परंपरा अपेक्षाकृत अधिक थी। आध्यत्मिक स्वनिर्माण और स्वान्वेषण के लिए एक अत्यंत बहुपक्षीय और बहुस्तरीय प्रावधान रखते हुए, उसे स्वयं अपने को जिस नाम से पुकारने का कुछ अधिकार था और एक ही नाम जो उसे ज्ञात था, वह था सनातन धर्म—वह धर्म जो शाश्वत और नित्य है। .....

अब यहीं पहली चकरा देनेवाली कठिनाई आती है जिस पर यूरोपीय मस्तिष्क लड़खड़ा जाता है; क्योंकि हिन्दू धर्म क्या है इसे समझने में वह अपने को असमर्थ पाता है।..... जिसका कोई कठोर धर्मसिद्धांत न हो, जो नरक दंड का डर दिखाकर विश्वास की माँग न करे, कोई धर्मतत्त्व विषयक दीक्षार्थी न हों, यहां तक कि कोई निश्चित धर्म-दर्शन, 'कोई धर्मसार न हो, जो उसे विरोधी अथवा प्रतिद्वंद्वी धर्मों से अलग करे, तो फिर वह धर्म कैसे हो सकता है जिसका कोई पोप अध्यक्ष न हो, संचालन करने वाली कोई धार्मिक संस्था न हो, कोई गिरजाघर, चैपल या सामुदायिक व्यवस्था न हो, उसके सभी अनुयायियों पर बाध्यकारी किसी प्रकार का धार्मिक बंधन न हो, कोई एक प्रशासन अथवा अनुशासन न हो तो वह धर्म कैसे हो सकता है ? क्योंकि हिन्दू पुजारी और पुरोहित तो केवल अनुष्ठान करानेवाले कर्मकांडी हैं बिना किसी धार्मिक सत्ता या अनुशासनात्मक अधिकारों से युक्त हुए और पंडित लोग केवल शास्त्र के व्याख्याकार हैं, धर्म के विधायक अथवा उसके शासनकर्ता नहीं। और फिर क्या हिन्दुत्व को एक धर्म कहा जा सकता है जब वह सभी मतों को स्वीकार कर लेता है, यहाँ तक कि एक प्रकार की उच्चाकांक्षी नास्तिकता

और अज्ञेयवाद को भी मंजूर करता है तथा हर संभव आध्यात्मिक अनुभूतियों और सब प्रकार के धार्मिक साहसिक कार्यों की अनुमति देता है ?.....

भारतीय मानस के लिए धर्म का सबसे कम महत्त्व का हिस्सा उसका समताग्रह है; धार्मिक भावना की महत्ता है, धर्म की शास्त्रीयता की नहीं।.....

हिन्दुत्व ने सदैव व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन के संगठन को अत्यधिक महत्त्व दिया है; उसने जीवन के किसी पक्ष को धर्म निरपेक्ष अथवा धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन से बाह्य वस्तु समझकर नहीं छोड़ा है।.....

पश्चिम की मनोवृत्ति बहुत समय से सारी मानवता के लिए एक ही धर्म के आक्रामक और बिल्कुल तर्क विरुद्ध विचार को पोषित करती आई है, एक ऐसा धर्म जो अपनी संकीर्णता, धर्मसिद्धान्तों की एक श्रेणी, एक उपासना पद्धति, अनुष्ठानों की एक प्रणाली, विधि-निषेधों का एक विन्यास, एक धार्मिक अध्यादेश के ही बल पर सार्वभौम हो। वह संकीर्ण असंगति एक सच्चे धर्म के रूप में इठलाती फिरती है जिसे यहाँ लोगों द्वारा उत्पीड़ित किये जाने के डर से और दूसरे लोकों में ईश्वर द्वारा आध्यात्मिक अस्वीकार अथवा भयंकर अनंत दंड किये जाने के डर से सभी को स्वीकार करना चाहिए। मानव तर्कहीनता का यह विकृत सृजन, इतना अधिक असहिष्णुता, क्रूरता, रूढ़िवादिता और आक्रामक कट्टरपंथी का यह जनक भारत के स्वतंत्र और लचीले मानस को कभी भी दृढ़तापूर्वक पकड़ नहीं पाया है।'' (अगस्त 1919, वही., पृ. 155-156)।

''**हिन्दू** सहन करने को तैयार है। वह नए विचारों के लिए खुला है—और उसकी संस्कृति में आत्मसात्करण की विलक्षणा क्षमता है, पर हमेशा प्रावधान यही है कि उसके केन्द्रीय सत्य को स्वीकारा जाए।'' (जून, 1926, वही, पृ. 188)।

"आक्रामक धर्मों के साथ सदैव यही होता आया है; वे पृथ्वी को रौंद डालना चाहते हैं। दूसरी तरफ हिन्दुत्व सहन शील है और यही उसके लिए खतरा है।.....

हिन्दुत्व में केन्द्रीय वस्तु आध्यात्मिकता है और ऐसा कोई विशाल आन्दोलन नहीं हो सकता जिसके पीछे आध्यात्मिकता न हो," (8 अगस्त 1926, वही, पृ. 192-193)।

"भारत में....हम एक स्वार्थी और निर्जीव शिक्षा के द्वारा अपनी प्राचीन संस्कृति और परम्परा की सभी जड़ों से काट दिए गए हैं।" (20 नव. 1909, वही, पृ. 67)

"रिलीजन शब्द के जैसा अपने अर्थ में लचीला और अनिश्चित और कोई शब्द नहीं है। यह शब्द यूरोपीय है।.... भारतीय 'रिलीजन' या धर्म में जो कुछ भी सम्मिलित किया जा सकता है....संक्षेप में वह धर्म या धार्मिकता से जीवन जीना है। जिसमें पूरा जीवन धर्म से अनुशासित होता है....."

"औसत हिन्दू 'रिलीजन' को धर्म के रूप में समझने की अपनी धारणा में ईश्वरीय नियम के अनुसार जीवन जीने में, सही हैं; पर ईश्वरीय नियम पलायनकारी और अस्थायी प्रथाओं का समूह नहीं है, वह है, केवल अपने लिए नहीं, बल्कि अपने और दूसरों के भीतर स्थित ईश्वर के लिए जीना, सारे जीवन को एक साधना बना देना जिसका उद्देश्य ही कर्म, प्रेम और ज्ञान के द्वारा संसार में ही ईश्वर को प्राप्त करना है।" (1910, वही, पृ. 71-72)।

"मुझे विज्ञान नहीं चाहिए, न धर्म चाहिए, न थियोसीफी चाहिए, केवल वेद चाहिए।.....मैं उस वेद को सनातन धर्म की नींव मानता हूँ; मैं उसे हिन्दुत्व के भीतर छिपा देवत्व मानता हूँ—किन्तु एक आवरण अलग

हटाने की जरूरत है, एक परदा ऊपर उठाना है। मैं उसे जानने योग्य और खोजने योग्य मानता हूँ" (वही, पृ. 99)

"विष्णु का विधान तब तक नहीं चल सकता जब तक कि रुद्र का ऋण चुकाया नहीं जाता...ईसा मसीह और बुद्ध आए और चले गए, पर वे रुद्र हैं जो अभी भी संसार को अपनी मुट्ठी में पकड़े हुए हैं" (मई 1919 वही पृ. 153)।

"(हिन्दुत्व) पहले तो एक बिना मताग्रह का, व्यापक धर्म है और उसने इस्लाम तथा ईसाई धर्म को भी अपने में सम्मिलित कर लिया होता, यदि उन्होंने इस प्रक्रिया को सहन कर लिया होता तो।" (वही, पृ. 152)।

स्वामी श्रद्धानन्द (1857-1926)

स्वामी श्रद्धानन्द जी अपन आत्मचरित "कल्याण मार्ग का पथिक" पुस्तक में शीर्षक देते हैं—"हिन्दू देवी का मातृभाव"—इस शीर्षक में इन्होंने पूर्वाश्रम के अपनी धर्मपत्नी के साथ अपने व्यक्तिगत संस्मरणों का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है।

स्वामी जी द्वारा लिखित पुस्तक "हिन्दू संगठन" जिसे श्रद्धानन्द ग्रंथावली में प्रकाशित किया गया है (संपादक डॉ. भवानी लाल भारतीय) उसकी कुछ पंक्तियों को प्रस्तुत किया जा रहा है, जो उनके विचारों को सुस्पष्ट करती हैं।

"मेरा सर्वप्रथम सुझाव यह है कि प्रत्येक नगर और शहर में एक हिन्दू राष्ट्र-मंदिर की स्थापना की जानी चाहिए जिसमें 25 हजार व्यक्ति एक साथ समा सकें और उन स्थानों पर प्रतिदिन भगवद्गीता, उपनिषद्, रामायण और महाभारत की कथा होनी चाहिए। इन राष्ट्र-मन्दिरों का प्रबंध स्थानीय सभा के हाथ में रहना चाहिए और वह इन स्थानों के अन्दर अखाड़े,

कुश्ती, गदका, आदि खेलों का भी प्रबन्ध करे जबकि हिन्दुओं के विभिन्न साम्प्रदायिक मन्दिरों में उनके इष्ट देवताओं की पूजा होती है। इन उदार हिन्दू मंदिरों में तीन मातृशक्तियों की पूजा का प्रबन्ध होना चाहिए और वे हैं—(1) गो माता, (2) सरस्वती माता और (3) भूमि माता। वहाँ कुछ जीवित गौएँ रखी जानी चाहिए जो कि हमारी समृद्धि की द्योतक हैं, उस मंदिर के प्रमुख द्वार पर गायत्री मन्त्र लिखा जाना चाहिए जो कि प्रत्येक हिन्दू को उसके कर्तव्य का स्मरण कराएगा तथा अज्ञान को दूर करने का संदेश देगा, और उस मन्दिर के बहुत ही प्रमुख स्थान पर भारत माता का एक सजीव नक्शा बनाना चाहिए, इस नक्शे में उसकी विशेषताओं को विभिन्न रंगों द्वारा प्रदर्शित किया जाए, और प्रत्येक भारतीय बच्चा मातृभूमि के सम्मुख खड़ा होकर के उसे नमस्कार करे और यह प्रतिज्ञा दोहराए कि वह अपनी मातृभूमि को उसी प्राचीन स्थान पर पहुँचाने के लिए प्राणों तक की बाजी लगा देगा, जिस स्थान से उसका पतन हुआ था।''

स्वामी जी द्वारा स्थापित' ''भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा'' के द्वारा भी उनकी हिन्दू शब्द और हिन्दू धर्म के प्रति गहरी निष्ठा प्रकट होती है।

अपने द्वारा प्रकाशित—श्रद्धा, लिबरेटर आदि समाचार पत्रों के द्वारा धार्मिक एवं राजनैतिक विषयों पर लिखते हुए वे सर्वदा हिन्दू शब्द का ही प्रयोग करते थे।

स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर (1883-1966)

''हिन्दुत्व केवल शब्द मात्र ही नहीं, अपितु अपने आप में एक संपूर्ण इतिहास है।'' (हिन्दुत्व, पृ. 11)

''आज इस नाम का जो अभिप्राय है, उस अभिप्राय की अभिव्यक्ति की शक्ति इसे 40 शताब्दियों में उपलब्ध हुई है। अनेक महानतम योद्धा, इतिहासज्ञ, दार्शनिक, कवि, विधिज्ञ और विधि निर्माता, शास्त्रों के प्रकाण्ड पंडित इसी नाम के लिए संघर्ष करते रहे हैं। उन्होंने इसके लिए संग्राम ही

नहीं किया अपितु सर्वस्व भी समर्पित किया है। क्या यह नाम हमारी जाति के असंख्य महान कार्यों का ही प्रतिफल मात्र नहीं है?" (हिन्दुत्व, पृ. 11)

देवता स्वरूप भाई परमानन्द (1876-1947)

भाई परमानन्द जी, अपनी पुस्तक "**हिन्दू संगठन और आर्य समाज आन्दोलन**" (पृ. 11) में लिखते हैं—"हिन्दू हमारे लिए यह एक नाम ही नहीं है। इसके साथ तो आरम्भ से लेकर हमारी जाति का इतिहास बँधा है।....इस नाम की कथा बताते वाले हमारे कवि और अवतार हुए, इसके लिए शास्त्रों एवं दर्शनों के रचयिता हुए हैं। इसकी मानरक्षा के लिए हमारे वीर और क्षत्रिय युद्ध करते रहे, इसके लिए उन्होंने अपने प्राणों को वार दिया।"

लाला लाजपत राय (1865-1928)

लाला लाजपत राय अपनी पुस्तकों यथा "तरुण भारत" "सम्राट् अशोक" एवं लेखों और पत्रों में सर्वत्र हिन्दु शब्द का ही बड़े गर्व से उल्लेख करते हैं।

तरुण भारत (पृ. 132)....."राजनीतिक क्षेत्र में एक ऐसा शान्त और त्यागी हिन्दू युवक अवतीर्ण हुआ.....उसका नाम अरविन्द घोष है।' सम्राट अशोक (पृ. 48) "**हिन्दू** शास्त्रों के अनुसार कोई राजा स्वतंत्र नहीं था।"

डॉ. केशवराव बलीराम हेडगेवार (1889-1940)

डॉ. हेडगेवार ने हिन्दुओं की धार्मिक, राजनैतिक व सामाजिक स्थितियों को देखते हुए अनुभव किया कि हिन्दू समाज की सभी समस्याओं का निदान हिन्दू संगठन है। उसके लिए उन्होंने 1925 में विजयादशमी के

दिन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की और घोषणा की कि ''**भारत हिन्दुराष्ट्र है। इसे संगठित कर देश को परम वैभव के शिखर पर पहुँचाऊँगा।**'' (संघ बीज के वृक्ष डॉ. केशवराव हेडगेवार, सी. पी. मिशीकर, पृ. 63)।

'आप हिन्दू की क्या परिभाषा करते हैं' के उत्तर में उन्होंने कहा 'मैं कोई पंडित नहीं हूँ। परिभाषा करना पंडितों और विद्वानों का काम है। जो समाज साक्षात् दिखाई दे रहा है, उसके घटकों को संगठित करने का कार्य संघ ने हाथ में लिया है' (वही, पृ. 34)।

''हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति के भले के लिए हमें यह कार्य करना चाहिए और अपनी उज्ज्वल संस्कृति की रक्षा कर उसे अधिक पुष्ट करना चाहिए। तभी आज की दुनिया में हम और हमारा समाज टिक सकेंगे।'' (वही पृ. 43)

माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर (1906-1973)

'गुरुजी' के नाम से विख्यात इस महापुरुष ने हिन्दू संगठन कार्य को बहुत आगे बढ़ाया। उन्होंने कहा ''संगठन के बिना हिन्दू समाज के सामने कोई उपाय नहीं है। देश, धर्म और संस्कृति की सेवा करने वाला कार्य अवश्यमेव ईश्वरीय कार्य होता है'' (श्री गुरुजी, समग्रदर्शन, खंड 1, पृ. 11)।''बुद्धि देवता विनायक हमें बतलाता है कि **हिन्दुस्तान हिन्दू राष्ट्र** है और चंडी देवता बतलाता है कि संगठन के बिना सामर्थ्य नहीं है, इसलिए राष्ट्र की उन्नतावस्था के लिए संगठनकर बलवान होना आवश्यक है'' (वही, पृ. 53)।''

अपने हिन्दू राष्ट्र का पूर्ण वैभव एवं इसकी महानता का पुनर्ज्जीवन हमारा एकमात्र परम लक्ष्य है....हमारे राष्ट्र का पुनरुद्धार मनुष्य निर्माण से होना चाहिए, उसमें शक्ति का ऐसा संचार होना चाहिए जिससे वह

मानवीय दुर्बलताओं को पराभूत करने में और प्रेम, आत्म संयम, त्याग, सेवा एवं चारित्र्य के हमारे परम्परागत सद्‌गुणों की मूर्ति बनकर हिन्दू पुरुषार्थ के भासमान प्रतीक के रूप में खड़ा होने में समर्थ हो सके।" (पाञ्चजन्य, 10.11.96)।

संघ के तृतीय सरसंघचालक बाला साहब देवरस ने हिन्दू संगठन को समाज के विभिन्न वर्गों में फैलाया, अनेक समाजोपयोगी योजनाएं चलाई तथा अनेक हिन्दू संगठनों को जन्म दिया जो आज संघ परिवार कहलाते हैं।

निसंदेह रा. स्व. संघ ने हिन्दू संगठन द्वारा हिन्दू समाज को नई शक्ति प्रदान की है। इसे भारत को हिन्दू राज्य का सपना साकार करने के लिए और अधिक तीव्रता व कर्मठता से कार्य करना चाहिए।

पं. भगवद्दत्त (1893-1968)

"यदि कोई भोला आर्य समाजी कहे कि यहाँ तो हिन्दुत्व का विरोध है, आर्य समाज का नहीं, तो उसकी स्थूल बुद्धि के विषय में मौन रहना ही भला है।" (प्राचीन भारतीय राजनीति" रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ सोनीपत, हरियाणा)

पं. रघुनन्दन शर्मा

पं. रघुनन्दन शर्मा अपने वैदिक सम्पत्ति ग्रंथ में लिखते हैं—"व्यापारियों के माध्यम से भारतीय संस्कृति उन देशों में पहुंची और वहाँ के निवासियों ने श्रेष्ठ हिन्दू संस्कारों को स्वीकार कर लिया।"

म. म. पं. श्री पाद दामोदर सातवलेकर

सातवलेकर जी अपनी पुस्तक "हिन्दू संगठन" में अथर्ववेद के इस मंत्र द्वारा हिन्दू शब्द का निर्वचन करते हैं— हिङ्कृण्वती .... दुहामविश्वभ्याम्। (9/10/5) तथा हिन्दू संगठन पर बल देते हैं।

पं. सत्यव्रत सामश्रमी

सामश्रमी जी लिखते हैं—वयमपि "हीनञ्च दूषयत्यस्माद हिन्दू" इति मेरूतंत्र व्युत्पादनम भिमत्य "हिन्दू" नाम कथतेऽपि गौरवमेव मन्यामहे। (निरुक्तालोचन पृ. 70)

भावार्थ—हम लोग भी "जो हीनता को दूषण मानता है, वह हिन्दू है" मेरुतंत्र की इस व्यत्पत्ति को स्वीकार कर अपने को हिन्दू कहने में गौरव मानें।

वैद्य गुरुदत्त (1894-1989)

वैद्य जी ने इस विषय पर तीन पठनीय पुस्तकों का लेखन ही कर दिया है, पाठकों को इन्हें अवश्य पढ़ना चाहिए।

1. "मैं हिन्दू हूँ", 2. "वर्तमान दुर्व्यव्यवस्था का समाधान हिन्दू राष्ट्र" और 3. हिन्दुत्व की यात्रा।

पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय (1881-1968)

उपाध्याय जी ने स्वामी दयानन्द की जीवनी ही "**हिन्दुत्व के रक्षक-स्वामी दयाननन्द**" के नाम से लिखी है। पाठकों से आग्रह है कि इस पुस्तक का प्रथम अध्याय "हिन्दू और हिन्दुत्व" पठनीय है, अवश्य पढ़ें। वहाँ वे लिखते हैं—"**हिन्दू और हिन्दुत्व की परिभाषा देने के बहुत से प्रयत्न हुए और वे पूर्णतया सफल नहीं रहे। क्या हिन्दू एक धार्मिक, सामाजिक अथवा राजनैतिक इकाई है? कोई नहीं जानता हिन्दू शब्द का क्या अर्थ होता है, तो भी प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू शब्द के भाव को अनुभव करता है।**"

इन सब महापुरुषों एवं विद्वानों ने बिना किसी प्रकार के संकोच और लज्जा एवं के गर्व के साथ हिन्दू का प्रयोग किया है। अतः हम सबको गर्व के साथ अपने को हिन्दू कहना चाहिए। महर्षि व्यास का वचन है—"**महाजनो येन गतः स पन्थः**"।

7. हिन्दू की परिभाषा एवं लक्षण

प्राचीन काल से लेकर आज तक हिन्दू शब्द को परिभाषित करने के बहुत से प्रयत्न हुए और हो भी रहे है। लेकिन अब तक पूर्णतया परिभाषित करने में किसी को सफलता नहीं प्राप्त हो सकी है। वस्तुतः हिन्दू शब्द लोक जीवन में इतना अधिक व्यापक है कि इसको सर्वाङ्ग में परिभाषित नहीं किया जा सकता, इसका अपरिभाषित होना ही इसकी महानता को प्रकट करता है।

पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय की पंक्तियाँ को इस संदर्भ में प्रासंगिक होने से पुनः दिया जा रहा है—"**हिन्दू और हिन्दुत्व की परिभाषा देने के बहुत से प्रयत्न हुए और वे पूर्णतया सफल नहीं हो सके। क्या हिन्दू एक धार्मिक, सामाजिक अथवा राजनैतिक इकाई है? कोई नहीं जानता हिन्दू शब्द का क्या अर्थ होता है, तो भी प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू शब्द के भाव को अनुभव करता है।**"

महर्षि दयानन्द के हिन्दू धर्म के संबंध में व्यक्त विचार भी हिन्दू शब्द की व्यापकता को समझने में सहायक होते हैं। अतः पुनः प्रस्तुत हैं—"हिन्दू धर्म समुद्र (सिन्धु ले.) के गुण रखता है; जिस प्रकार समुद्र में असंख्य लहरें उठती हैं उसी प्रकार इस धर्म में देखिए। ऐसे लोगों का भी मत है जो छानकर पानी होते हैं.....एक मत ऐसे लोगों का है जो दुग्धाहारी हैं....। एक मत ऐसे लोगों का है जो जीवन भर यति रहते हैं। एक मत ऐसे लोगों का है जो निराकार परमात्मा को पूजते हैं;....। फिर एक मत ऐसे लोगों का भी है जो अवतारों की पूजा करते हैं। एक मत

उनका भी है जो शूद्रों के हाथ से पानी पीते हैं और इनसे भोजन बनवाकर खाते हैं। इतना होने पर भी यह सबके सब हिन्दू हैं। कोई इनको हिन्दू धर्म से निकाल नहीं सकता।''

इसी प्रकार का विचार स्वामी विवेकानन्द जी भी प्रकट करते हैं—

''हिन्दू एक सम्प्रदाय का प्रतीक नहीं वरन् उदार व्यापक शब्द है। हिन्दू शब्द के अन्तर्गत भारत की समस्त संस्कृति, सभ्यता, मानव विकास, इतिहास एवं भारतीय पंथों एवं मतमतान्तरों का समावेश हो जाता है। हिन्दू शब्द ओर छोर हीन सागर तुल्य है जिसमें समस्त नदियाँ विभिन्न नामों के साथ जल लाती हैं और उसमें मिलकर एकाकार हो जाती हैं।''

हिन्दू शब्द के आधुनिक मीमांसाकार वीर सावरकर भी इस शब्द की अपरिभाषेयता को स्वीकारते हुए कहते हैं—

''जो नाम मानव जाति के लिए जीवन प्रद और कर्तव्य सूचक तथा गैरवपूर्ण रहे हैं उनमें से एक है हिन्दुत्व।....इस नाम के साथ इतनी भावनाएँ और पद्धतियाँ संलग्न है और वे इतनी बलवती, गहन और गंभीर है कि इस नाम का विश्लेषण तथा व्याख्या करना असम्भव प्रायः होता है।'' (हिन्दुत्व, पृ. 10)। अतः इसके लक्षण मात्र किए जा सकते हैं।

सावरकर जी लिखते हैं **''हिन्दुत्व के लक्षण हैं—एक राष्ट्र, एक जाति, तथा एक संस्कृति। इन सब लक्षणों को संक्षेप में इस भाँति प्रस्तुत किया जा सकता है कि वही व्यक्ति हिन्दू है जो सिन्धुस्थान (हिन्दुस्थान) को केवल पितृभूमि ही नहीं, अपितु पुण्य भूमि भी स्वीकार करता है। हिन्दुत्व के प्रथम दो लक्षणों-राष्ट्र तथा जाति का समावेश ''पितृभूमि'' शब्दों में हो जाता है और तृतीय लक्षण संस्कृति की अभिव्यक्ति 'पुण्य भूमि' शब्द से होती है क्योंकि संस्कृति में ही सब संस्कार समाविष्ट हैं और वही किसी भूमि को पुण्य भूमि का रूप प्रदान करती है''** (हिन्दुत्व, पृ. 100)।

पुनः इन विचारों को श्लोकबद्ध करते हुए हिन्दू के भौगोलिक सांस्कृतिक लक्षण इस प्रकार दिए हैं—

आसिन्धोः सिन्धु पर्यन्ता यस्य भारत भूमिका।
पितृभूः पुण्य भूश्चैव स वै हिन्दुरिति स्मृतः ॥

(हिन्दुत्व, पृ. 101)

"प्रत्येक वह जो सिन्धु नदी से लेकर समुद्र तक फैली भूमि को साधिकार अपनी पितृभूमि एवं पुण्यभूमि मानता है, वह हिन्दू है।"

इसकी प्रशंसा करते हुए स्वामी श्रद्धानन्द जी ने लिखा था "**वीर जी जैसे युगपुरुष क्रान्तिकारी से ही यह अपेक्षा थी कि वे समयानुसार ऐसे शास्त्र की रचना करें।**" वे पुनः लिखते हैं—"**हिन्दुत्व के लेखक वीर सावकर में प्राचीन आर्य युग के किसी महर्षि की आत्मा उद्भूत हुई है जिसने किसी शास्त्र की रचना की है।**" हिन्दू के लक्षण करने का एक नूतन प्रयास इस प्रकार है—

हिन्दू लक्षणम्—

भारतीयर्षि संप्रोक्तान् इहामुत्रार्थं साधकान्।
योऽङ्गीकरोति सश्रद्धं सत्सिद्धांतान् सनातनान् ॥1 ॥
यत्रकुत्राणि जातोऽसौवाऽस्तु यः को जन्मना।
सच्चीलोदार चरितः सोऽत्र हिन्दुरीति स्मृतः ॥2 ॥

भावार्थ—"भारतीय ऋषियों द्वारा कहे गये लोक परलोक साधक सनातन सिद्धान्तों को जो श्रद्धापूर्वक स्वीकार करता है। ऐसा सदाचारी और सच्चरित्र व्यक्ति चाहे वह कहीं भी पैदा हुआ हो या जन्म से कोई भी हो, हिन्दू है।"

हिन्दू शब्द की व्याख्या करने के अन्य बहुत से महानुभावों ने प्रयास किए और भविष्य में भी करते रहेंगे। इससे इस शब्द की महानता ही प्रकट होती है।

यहाँ यह कहना भी उचित होगा कि अंग्रेजी का हिन्दुइज़्म शब्द न तो हिन्दू धर्म का परिचायक है न हिन्दुत्व का ही। क्योंकि हिन्दुइज़्म, सोशलिज्म, कम्युनिज्म, कैपटलिज्म की तरह कोई इज़्म या वाद नहीं है। अतः हिन्दू धर्म हिन्दूवाद नहीं है। यह तो सम्पूर्ण सनातन प्राणी मात्र का धर्म है जिसकी परिभाषा संक्षेप में इस प्रकार की जा सकती है :

''हिन्दू धर्म ईश्वर प्रदत्त वह शाश्वत ज्ञान एवं कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का मार्गदर्शक विधान है जो आस्तिक-नास्तिक सभी मनुष्यों के उत्थान व कल्याण के लिए है।

यह एक मानवतावादी, समतावादी, सार्वभौमिक, सार्वकालिक, सत्यस्वरूप, आत्मविवेक आधारित, पक्षपात रहित तथा तर्कसंगत जीवन व्यवस्था है, जो रंगभेद, नस्लभेद, लिंगभेद, भाषाभेद , एवं राजनैतिक चिन्तनों की सीमाओं से परे है।

यह लौकिक और पारलौकिक जीवन का सर्वोत्तम मार्ग है। इसके लिए सृष्टिकर्ता और मनुष्य के बीच किसी पारदर्शी शरीर मध्यस्थ मुल्ला, मौलवी, मसीहा, पंडित आदि की आवश्यकता नहीं है।

यह सत्याधारित तथा पक्षपात रहित व्यवहार पर आधारित है तथा मतमतान्तरों के पारस्परिक रागद्वेष, घृणा एवं व्यक्ति निष्ठा व कट्टरपन से मुक्त है।

यह स्वतंत्र चिन्तनोन्मुखी, ज्ञानविज्ञान प्रेरक व सत्यनिष्ठ कर्त्तव्य पालन की आचार संहिता है जिनका आधार वेद और अन्य धर्म शास्त्र हैं।''

अतः हिन्दू धर्म मात्र एक जीवन पद्धति ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण जीवन दर्शन एवं प्राणीमात्र का धर्म है।

8. हिन्दू नाम पर आक्षेपों का समाधान

आक्षेप 1 :

हिन्दू नाम की उत्पत्ति के विषय में देशी विदेशी सभी विद्वान वर्षों से यही प्रचारित करते आ रहे हैं कि सबसे पहले ईरानियों (प्राचीन फ़ारसवासी) ने सिन्धु नदी के पश्चिमी भाग में रहने वाले निवासियों को हिन्दू कहा क्योंकि वे (ईरानी) लोग सकार का उच्चारण हकार करते थे। अतः हमारा हिन्दू नाम ईरानियों ने दिया है।

जेंदा-अवेस्ता में सबसे पहले सप्तसिन्धु के स्थान पर 'हप्त-हिन्दू' शब्द मिलता है। इस नाम को भारतीयों ने स्वीकार कर लिया। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे है।

(1) **रामधारी सिंह दिनकर** अपने ग्रंथ 'संस्कृति के चार अध्याय' में लिखते हैं कि—"**भारत से बाहर के लोग भारत अथवा भारतीयों को 'हिन्दू' या 'इन्डो' कहा करते थे।......इरानियों द्वारा दिया हिन्दू नाम संस्कृत भाषियों के द्वारा सम्पूर्ण भारतवासी जनता के समुच्चय नाम के रूप में स्वीकृत हो गया।**" (पृ. 112)

(2) **मोनियर विलियम्स** का कहना है कि "**एशिया में पहाड़ों के दर्रे पार करके भारत आने वाले महान आर्य समुदाय के लोग 'सिन्धु' नदी के तटवर्ती जिलों में बसे थे। सिन्धू नदी को अब 'इन्डस' भी कहते हैं। अरब लोगों ने इसे हिन्दू उच्चारित किया और अपने आर्य भाइयों को हिन्दू नाम दे दिया। ग्रीक लोगों ने भारत के विषय में सर्वप्रथम अरब लोगों से जाना और इसके कड़े उच्चारण को छोड़कर हिन्दुओं को 'इन्डोई' सम्बोधित किया।**" (हिन्दुज्म, पृ. 1)

(3) डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् अपनी पुस्तक "दी हिन्दू व्यू आफ लाइफ" (पृ. 12) में लिखते हैं कि **"हिन्दू सभ्यता इसे इसलिए कहा गया कि इसके मूल निवासी या प्रारम्भिक अनुयायी सिन्धु नदी से सिंचित भूमि पर रहते थे। यह क्षेत्र उत्तर पश्चिमी सीमान्त प्रान्त और पंजाब था। हिन्दू धर्म-ग्रंथ वेदों में से सबसे प्राचीन ऋग्वेद में ये बातें अंकित हैं और इनके नाम पर ही इस काल के भारतीय इतिहास के नाम दिया गया है। सिन्धु नदी से भारत की ओर रहने वालों को अरब देश के निवासियों ने हिन्दू कहा और पश्चिमी आक्रमणकारियों ने भी"।**

समाधान :

यह बड़े ही आश्चर्य का विषय है कि संस्कृत के विशाल वैदिक एवं लौकिक वाङ्मय में संसार के उत्कृष्टतम साहित्यिक शब्द राशि विद्यमान है। शब्द रचना की पाणिनीय व्याकरण सदृश अद्भुत वैज्ञानिक प्रक्रिया है। तत्पश्चात् भी यह समाज अपने लिए स्वयं के अपने शब्द भण्डार के शब्दों को प्रयुक्त नहीं करता है! अपितु विदेशियों द्वारा आरोपित शब्द को झट आत्मसात् कर लेता है! हमने अपने पुराने नाम शीघ्र छोड़ दिए उनके द्वारा थोपा गया संबोधन ही मुख्य नाम बन गया। यह बात कुछ युक्ति-युक्त प्रतीत नहीं होती है।

पूर्व के पृष्ठों में यह सिद्ध किया जा चुका है कि **जेंदा-अवेस्ता** में हिन्दू शब्द कहीं नहीं है अपितु ईसा के समकालीन पारसी ग्रंथ **वेंदिदाद** में है और यह भी सिद्ध किया जा चुका है कि केवल प्राचीन फ़ारसी भाषा में ही संस्कृत के पदादि **सकार** का हकार होने की परंपरा नहीं है, अपितु भारतीय भाषाओं में भी संस्कृत के पदादि **सकार** का **हकार** होने की परंपरा वैदिक वाङ्मय पाणिनीय व्याकरण, प्राकृत, असमियाँ, हिन्दी तथा अन्य लोकभाषाओं में भी हैं। भारतीय भाषा परंपरा में ही 'सिन्धु' शब्द

का परिवर्तन '**हिन्दु**' में हुआ है। यह भी पूर्व के पृष्ठों में **सिद्ध** किया जा चुका है। सर्वोच्च न्यायालय ने 11 दिसम्बर 1995 के अपने हिन्दू विषयक ऐतिहासिक निर्णय में भी यह स्वीकार करते हुए कहा है कि "**सामान्यतः सभी विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि हिन्दू शब्द 'सिन्धु' नदी से बना है।**" (हिन्दुत्व एक जीवन पद्धति, पृ. 1)

सच यह है कि **सिन्धु से 'हिन्दु' शब्द का निर्माण भारत में ही हुआ है। प्रथम यह शब्द भारत में ही लोकप्रिय बनकर भारत से बाहर पश्चिम के देशों में लोकप्रिय बना।**

आक्षेप 2 :

संस्कृत के किसी शब्द के, किसी भी भारतीय भाषा परंपरा में किसी काल में, कहीं भी, पदादि सकार का हकार नहीं हुआ है। भाषा विज्ञान के अनुसार भाषा का परिवर्तन नियमाधीन होता है। अतः भारतीय भाषा में 'सिन्धु' का 'हिन्दु' नहीं हो सकता है!

समाधान

पूर्व के पृष्ठों में इस प्रश्न का समाधान हो चुका है कि भारतीय भाषा परंपरा में भी संस्कृत के पदादि सकार का हकार होता है। यहाँ उसके पुनः लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है। यहाँ हम भाषा विज्ञान की प्रामाणिकता की ही परीक्षा करते हैं।

प्रारंभ में जर्मनवासियों ने अपने भाषा विज्ञान की श्रेष्ठता के विषय में बहुत डींगें मारी हैं जैसे कि—डब्ल्यू डी. ह्विटनी कहता है कि "Germany is far more than any other country, the birth place and home of language." यानी "भाषा के मूल निवास एवं उत्पत्ति गृह के विषय में जर्मनी अन्य देशों से बहुत आगे है" (Language and the

Study of Lanaguage by W.D. Whiteney, 1967 मू. संदर्भ-पं. भगवद्दत्त वैदिक वाङ्मय का इतिहास से उद्धृत, पृ. 28)

एम. विन्टरनिट्ज 'हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर' में लिखता है कि "शब्दशास्त्र और भाषा विज्ञान के सभी क्षेत्रों में आज के जर्मन निवासी निर्विवाद नेता हैं।"

"Germans of today are the undisputed leaders in all fields of philology and linguistic science". (M. Winternitz, History of Sanskrit Literature-1927. मूल सन्दर्भ-वही, पृ. 28))

आज से 75 वर्ष पूर्व तक जर्भनों द्वारा तथाकथित भाषा विज्ञान के विषय में उपरोक्त गर्वोक्ति के बाद जैसे-जैसे इतिहास के क्षेत्र में पुरातत्व, भौतिक, रसायन, जीव विज्ञानादि का प्रवेश होता गया तथा वैज्ञानिक शोध होने लगे, तब जर्मनों द्वारा कल्पित तथाकथित भाषा विज्ञान की श्रेष्ठता दुर्दशा में बदल गई जो कि आगे के प्रमाणों से पता चलता है। आधुनिक युग के महान वैज्ञानिक तथा चिन्तक अल्बर्ट आइंस्टिन ने भाषा विज्ञान के सम्बन्ध में आर. एस. साकालेंड को दिए अपने अंतिम साक्षात्कार में विचार व्यक्त करते हुए कहा—

"Nearly all historians of science are philologists and do not comprehend what physicists were aiming at, how they thought and wrestled with these problems." (The Myth and the Truth—by N. S. Rajaram, Voice of India New Delhi)

भावार्थ—"प्राय: विज्ञान के सभी इतिहासकार भाषाशास्त्री हैं उन्हें इसका भी बोध नहीं है कि भौतिक विज्ञानी इतिहास की समस्याओं के विषय में क्या निश्चित करते हैं, कैसे सोचते हैं तथा उनको कैसे सुलझाने का प्रयास करते हैं।"

डॉ. राजाराम लिखते हैं कि—

"Philology is a word that is seldom used today. In Germany especially, it has acquired sucha disrepute as to be seemed as a term of disparagement like Alchemy. Nineteenth century philogists promised a great deal but delivered virtually nothing of value beyond a superficial classification of languages into various families." (The Politics of History, 1995 p. 186, Voice of India, New Delhi)

भावार्थ—''भाषाशास्त्र एक ऐसा शब्द है जिसे आजकल कभी कभार प्रयोग किया जाता है। जिस प्रकार कीमियागिरी'' को अवज्ञा के रूप में देखा जाता है, विशेषकर जर्मनी में यह उसी प्रकार अपकीर्तिजनक है। उन्नींसवीं सदी के भाषाशास्त्रियों ने बहुत परिश्रम किया परन्तु उसका कोई सार्थक निष्कर्ष नहीं निकला मात्र भाषाओं के विभिन्न परिवारों के काल्पनिक वर्गीकरण के।''

इसी विषय में श्री अरविन्द लिखते हैं—

"The Philologists indeed place a high value of their line of study, ..., and persist in giving it the name of Science; but the scientists are of a very different opinion. In Germany, in the very metropolis both of Science and of philology, the word philology has become a term of disparagement; nor are the philologists in a position to retort." (*Origin of Aryan Speech.*)

भावार्थ—''भाषाशास्त्री अपने अध्ययन के क्षेत्र को सचमुच मूल्यवान मानते हैं और इसे विज्ञान का नाम भी देते हैं। लेकिन वैज्ञानिकों के इससे बहुत भिन्न विचार हैं। जर्मनी में भाषा शास्त्र एक अप्रतिष्ठाजनक शब्द के रूप में देखा जाता है और आज के भाषा शास्त्री इसका मुँहतोड़ उत्तर दे सकने की स्थिति में नहीं हैं।'' वे पुनः लिखते हैं—

"Among all the many promising beginnings of which the nineteenth century was the witness, none perhaps was hailed with greater eagerness by the world of culture and science than the triumphant debut of Comparative Philology. None perhaps has been more disappointing in its results." (*Origin of Aryan Sppech.*)

भावार्थ—"उन्नीसवीं शताब्दी में संस्कृति एवं विज्ञान के क्षेत्र में बहुत उत्सुकता से प्रारम्भ होने वाला तुलनात्मक भाषा शास्त्र से अधिक चर्चा का कोई विषय नहीं था। संभवतः उनमें से कोई भी परिणाम में इससे अधिक निराशाजनक नहीं था।"

पं. युधिष्ठिर मीमांसक स्पष्ट लिखते हैं कि "आधुनिक भाषा विज्ञान का प्रासाद अधिकतर कल्पना की भित्ति पर खड़ा है।" (संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास, प्रथम संस्करण की भूमिका, पृष्ठ-5)।

डॉ. राजाराम अपने अध्ययन में लिखते हैं कि "Philology had no chance of becoming a science." (The Politics of History, p-190) यानी "भाषा शास्त्र का कोई वैज्ञानिक स्तर होने की सम्भावना नहीं है।"

वैदिक इतिहास के मर्मज्ञ प. भगवद्दत्त जी—भाषा विज्ञान के सम्बन्ध में लिखते हैं—

"यद्यपि जर्मन लोगों का परिश्रम स्तुत्य है तथापि उनके प्रतिपादन "मत" की सीमा का उल्लंघन नहीं कर सके हैं। विज्ञान की पदवी से कोसों दूर हैं। कारण विज्ञान के नियम स्थिर, निश्चयात्मक, अपवाद शून्य, देशकाल के बंधन से रहित, होते हैं। वायु, विद्युत, वर्षा आदि के नियम देश काल के बन्धन से रहित होकर सर्वत्र समान रूप से लागू होते हैं। परन्तु तथाकथित भाषा विज्ञान के नियमों की अवस्था सर्वथा इसके विपरीत है।" (वैदिक वाङ्मय का इतिहास, पृष्ठ 29)

प्रारम्भ में जर्मनों द्वारा भाषा विज्ञान के सम्बन्ध में की गई गर्वोक्ति आज कहाँ पर है, उसके विषय में डॉ. राजाराम लिखते हैं—

"A scientist in Germany feels insulted when you call him a philologist." यानी "यदि तुम किसी वैज्ञानिक को भाषा शास्त्री कहो तो वह अपमानित अनुभव करता है।"

पाठकों को पूर्व उल्लिखित सन्दर्भों को पढ़कर तथाकथित भाषा विज्ञान की निस्सारता एवं उसकी काल्पनिकता का ज्ञान हो गया होगा।

हिन्दू नाम विरोधी विद्वान बड़े अहंकार के साथ अपने तथाकथित भाषा विज्ञान संबंधी मत इन शब्दों में व्यक्त करते हैं—

—"जब कोई भाषा परिवर्तित होकर अन्य किसी भाषा का स्वरूप ग्रहण करती है तो, मूल भाषा में हुआ परिवर्तन किसी नियम के बिना ही, मनमानी से, नहीं होता है बल्कि नियमाधीन ही होता है क्योंकि जब किसी भाषा में परिवर्तन होने लगता है तब परिवर्तन का झुकाव (trend) समान परिस्थितियों में किसी एक क्षेत्र विशेष में एक कालावधि में एक ही दिशा में एक ही साथ हो जाता है। समान परिस्थितियों में भाषा की किसी एक नियत इकाई का परिवर्तन एक साथ एक ही दिशा (direction) में सर्वत्र होने से ही कम रहे हैं कि भाषा में होने वाले परिवर्तन "नियमाधीन" (पाठक इस नियमाधीन शब्द को याद रखें—ले.) ही होते हैं, मनमानी से नहीं। इसी नियम के बल पर हम दावा कर रहे हैं कि **संस्कृत के सिन्धु शब्द का किसी भारतीय भाषा में 'हिन्दु' यह रूप नहीं हुआ।"**

भाषा विज्ञान की नियमाधीनता

पूर्व में भाषा विज्ञान की काल्पनिकता पर थोड़ा प्रकाश डाला गया

था, अब यहाँ भाषा विज्ञान के तथाकथित नियमाधीन होने की भी समीक्षा की जा रही है।

स्वामी दयानन्द का मत है कि "एक भाषा दूसरी भाषा का अपभ्रंश होकर उत्पन्न होती है। ......ऐसे अपभ्रंश कुछ नियमों के अनुकूल होते हैं और कुछ अपभ्रंश **यथेष्टाचार** से भी होते हैं, इनके विषय में विशेष कहना नहीं है।" (वेद विषयक पाँचवां प्रवचन, पूना, बुधवार, 13 जुलाई 1975, उपदेश मंजरी)।

तुलनात्मक भाषा शास्त्र अर्थात् भाषा विज्ञान के लेखक-डॉ. मंगल देव शास्त्री लिखते हैं—

"भाषा परिवर्तन का नियम सर्वमान्य है। कोई भाषा, यदि उसकी रोकथाम का अच्छा प्रबंधन न हो तो कुछ काल के बाद परिवर्तित हो जाती है। किस क्रम से परिवर्तन होता है, **पाश्चात्त्य विद्वान अब तक निश्चित नहीं कर सके हैं।**.... मूल भाषा कालान्तर में इतनी परिवर्तित हो जाती है कि उसके एक रूप को जानने वाला उसके दूसरे रूप को आसानी से नहीं समझ सकता। **यह परिवर्तन कहाँ पर किस-किस प्रकार का हो सकता है, इसका कोई निश्चित नियम नहीं है।**"

प. भगवद्दत्त अपने 'वैदिक वाङ्मय के इतिहास' (पृष्ठ 34) में लिखते हैं कि "....वस्तुतः अपभ्रंशों में नियम नहीं बन सकते हैं।" ".....वस्तुतः अपभ्रंश भाषाओं के वर्ण परिवर्तन नियम कभी भी व्यापक नहीं होंगे।"

इसी प्रकार पं. युधिष्ठिर मीसांसक लिखते हैं कि "आधुनिक भाषा विज्ञान के नियम जिनके आधार पर अपभ्रंश भाषाओं के क्रमिक विकास और पारस्परिक संबंध को निश्चत किया गया है, अधूरे एवं एक देशी हैं।" (संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास, प्रथम संस्करण की भूमिका, पृष्ठ-5)

पूर्व उल्लिखित महानुभावों के भाषा विज्ञान के नियमाधीन होने सम्बन्धी विचार को पढ़कर पाठकों को भाषा विज्ञान के काल्पनिक नियमाधीनता का ज्ञान हो गया होगा। जिस नियमाधीनता का मिथ्या अहंकार पूर्वक दावा ये विद्वान करते हैं, उसकी यथार्थता का ज्ञान भी हो गया होगा। अतः **अपभ्रंश अनियमित होते हैं।**

आक्षेप 3 :

कुछ विद्वान हिन्दू शब्द को विदेशी मूल का सिद्ध करने के लिए तथाकथित कल्पित भाषा विज्ञान तथा भाषा विज्ञानियों का आश्रय लेते हुए कहते हैं कि भाषा वैज्ञानिक 'हिन्दू आदि' शब्दों को उधार का शब्द (Borrowed word) मानते हैं।

समाधान

पाश्चात्य विद्वान बहुत से संस्कृत के मूल शब्दों को भी उधार का शब्द मानते हैं। जैसे—मोनियर विलियम, अपने संस्कृत-अंग्रेजी शब्द कोश में क्रमेल शब्द पर लिखता है—borrowed from Greek अर्थात् संस्कृत का क्रमेल शब्द ग्रीक भाषा से उधार में लिया गया है।

क्या ये विद्वान इसे भी स्वीकार करते हैं ? वस्तुतः पाश्चात्यों के क्रीत दासों से इससे अधिक और क्या अपेक्षा की जा सकती है ? वे तो उनका राग अलापेंगे ही।

यथार्थ में क्रमेल शब्द को यूनानी के Camel शब्द से उधार लिया जाना मानना सर्वथा गप्प है। तथाकथित कल्पित भाषा विज्ञान के अपने काल्पनिक नियमानुसार भी उत्तरोत्तर अपभ्रंश भाषाओं में ऊपर नीचे के रेफ की निवृत्ति ही होती है, नये रेफ का संयोग नहीं होता है। यदि 'क्रमेल' शब्द 'कैमल' आदि किसी रेफ रहित प्रकृति से निष्पन्न होता तो

उसमें रेफ का संयोग नहीं होता। अतः क्रमेल की मूल धातु 'क्रमु पाद विक्षेप' ही है।

अतः तथाकथित भाषा तत्त्वविज्ञों के कहने से हिन्दू शब्द उधार का शब्द नहीं हो जायेगा। यह शुद्ध स्वदेशी एवं भारतीय शब्द है। पूर्व में यह सब सिद्ध किया जा चुका है।

आक्षेप 4 :

हिन्दू शब्द का अर्थ अरबी एवं फ़ारसी भाषा में अपमानजनक है। अतः इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

पूर्व में स्पष्ट किया जा चुका है कि अरबी भाषा परंपरा में हिन्दू शब्द गौरवशाली अर्थों में प्रयुक्त हुआ है तथा फ़ारसी भाषा के जन्म स्थान ईरान देश के बने परंपरागत शब्दकोशों में भी हिन्दू शब्द आदरपूर्वक गौरवशाली अर्थों में प्रयुक्त हुआ है।

हिन्दू नाम विरोधी विद्वान 'हिन्दू' शब्द के विकृत अर्थ को प्रकट करने वाले जिन गयासुल्लुगात, फिरोजुल्लुगात, जवाहरूल्लुगातादि कोशों को उल्लेख करते हैं, वे सबके सब प्रायः भारत के ही फ़ारसी भाषा के मुस्लिम विद्वानों द्वारा बनाए गए हैं, जो कि बहुत ही अर्वाचीन हैं जिनका काल 19वीं शताब्दी के अन्त से लेकर 20वीं शताब्दी के मध्य तक का है। इन कोशों के निर्मातागण हिन्दू द्वेषी मुसलमान हैं, इन्होंने हिन्दुओं को अपमानित करने के लिए, अच्छे अर्थों में प्रयुक्त हिन्दू शब्द को विकृत अर्थों में प्रयुक्त किया है जैसे—जहाँ पर हिन्दू शब्द का अर्थ है—"लड़कियों का दिल चुराने वाला (प्रेमी)" उसे उन्होंने मात्र 'चोर' में बदल दिया। हिन्दू शब्द का अर्थ है—"लड़कियों के गालों पर सुंदरता के परिचायक के रूप में होने वाला 'काला तिल' उसे इन्होंने 'काला' में बदल दिया।

इस प्रकार द्वेषपूर्वक लिखा गया अर्थ किसी प्रकार से प्रामाणिक नहीं हो सकता है। न ही हम इसे प्रामाणिक मानते हैं।

कुछ हिन्दुओं ने मुसलमानों को 'म्लेच्छ' जैसे घृणित शब्दों से संबोधित किया हैं जिसे मुसलमानों ने कभी स्वीकार ही नहीं किया। न ही उन्होंने अपने आपको मुसलमान कहना छोड़ा। इसी प्रकार हम उनके द्वारा विकृत अर्थों में प्रयुक्त 'हिन्दू' शब्द को कैसे छोड़ सकते हैं ? यदि घृणावश मुसलमान आर्य, वेद एवं अन्य श्रेष्ठ संस्कृत एवं हिन्दी के शब्दों को विकृत अर्थ में प्रस्तुत करने लगेंगे, तो क्या हम अपने आपको आर्य, वेद आदि शब्द से पृथक् कर लेंगे ? कदापि नहीं! मुसलमान इस्लामी जनून के समय हिन्दुओं के साथ सैकड़ों वर्षों के संघर्ष में हिन्दुओं को नष्ट नहीं कर सके। हिन्दूसमाज हिन्दू नाम के साथ संगठित रहा। अत: अब वे बौद्धिक षडयन्त्र करके गर्व बोधक 'हिन्दू' शब्द से हमारी निष्ठा डिगाने का प्रयास कर रहे हैं। अत: हमें उनके षडयन्त्र से अप्रभावित रहना चाहिए और **हमें गर्व से कहना चाहिए कि हम हिन्दू हैं** जिससे उनका षडयन्त्र सफल नहीं हो सके।

मुस्लिम शब्द का यथार्थ अर्थ : मुसलमान दूसरों पर कीचड़ उछालने से पहले स्वयं अपने 'मुस्लिम' शब्द को देख लें। यहां प्रसिद्ध अरबी विज्ञ-विद्वान की पंक्तियाँ प्रमाणार्थ प्रस्तुत की रहीं हैं।

डी. एस. मार्गोलियोथ कहते हैं—

"Finally a name had to be given to the new sect, and either accident or choice led to its being called the sect of the Muslims (Moslems) or Hanifs. Were these originally named by which the followers or ***Maslamah*** the prophet of the Banu *Hanifah* had been known ? Or had some other sect, monotheistic and professedly following Abraham, whose descendants according

to the Bible some of the Arabs were, been thus designated ? We cannot say; no Arab seems to have known anything about the Hanifs, except that Abraham was one, and *perhaps* one or two of the precursors of Mohammed; and since in Hebrew the word means "Hypocrite" and in Syriac "heathen", pious followers of Mohammed did not care to study its etymology. **The other name, muslim, meant naturally "traitor", and when the new sect came to be lampooned, it provided the satirists with a witticism; Mohammed showed some want of humour in adopting it, but displayed great ingenity in giving it an honourable meaning : whereas ordinarily signified one who handed over his friends to their enemies, it was glorified into meaning one who handded over his person to God; and though, like Christian,** it may conceivably have been first invented by enemies of the sect whom it designated, divine authority was presently adduced for the statement that Abraham coined the name. Like the jews, these new Abrahamites called their pagan brethren the Gentiles, using an Abyssinian word. The pagans appear to have ordinarilly called the new sect when it had ceased to be secret. Sabaean a word properly meaning Baptist, and belonging to a community still perpetuated as the Soubbas, whose home is in the marshes of the Euphrates. The application of the name to Mohammed's follwers may have been due to mere ignorance, as the Arabians of our day called Doughtly a Jew, because he was a Christain; or it may have been due to the prominence given by Mohammed to the ceremony of washing. (Mohammed and the Rise of Islam, p-116, Voice of India. New Delhi)

भावार्थ—मुस्लिम शब्द का सीधा सा अर्थ गद्दार (traitor) होता है। व्यङ्गकारों द्वारा जब इस नये मत की आलोचना तथा उपहास किया जाने लगा तब मोहम्मद ने इसे स्वीकार करने में असहनशीलता दिखाई परन्तु

इसे सम्मान जनक अर्थ प्रदान करने में बहुत चालाकी दिखाई। जो शब्द साधारणतया यह अर्थ—"जो अपने मित्र को उसके शत्रु को सौंप देता है" प्रकट करता था, उसे सम्मानजनक अर्थ—"वह जो अपने व्यक्तित्व को अल्लाह को समर्पित कर दे" प्रदान किया।

पाठकों को यह ज्ञात हो रहा होगा कि मुस्लिम शब्द के अर्थ को बदलकर किस प्रकार महिमा मंडित किया गया है।

आक्षेप 5 :

भारत पर इस्लामिक आक्रमण से पूर्व भारत में हिन्दू नाम के प्रयोग का प्रमाण नहीं मिलता। अतः यह नाम मुसलमानों द्वारा ही भारत में लाया गया है और यह विदेशी है। इसका प्रयोग ठीक नहीं है।

समाधान

हुएनसांग हर्षवर्धन के समय भारत आया था। उसने भारत को शिंतु-हिन्दु (सिन्धु-हिन्दु) के रूप में देखा जिसकी पूर्व में विस्तार से चर्चा की जा चुकी है। हर्षवर्धन 666 विक्रमी सम्बत् में राजगद्दी पर बैठा। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने संभवतः इन बातों को ध्यान में रखते हुए अपने "हिन्दू संगठन" पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा है—"संवत् 666 विक्रमी (मई 609 ईसवी) ज्येष्ठ मास में स्थानेश्वर (थानेश्वर) में हर्ष जिस समय गद्दी पर बैठा तो उस समय आर्यों की मातृभूमि का नाम आर्यावर्त से बदलकर हिन्दुस्थान हो गया।"

इससे यह सिद्ध होता है कि मुस्लिम आक्रमण से पहले भारत में हिन्दू शब्द का प्रयोग होता था। अतः यह स्वदेशी शब्द ही है। इसके प्रयोग में किसी प्रकार का विदेशीपन नहीं है। अरबी विद्वान तुर्फा ने आज से 3100 वर्ष पूर्व 'हिन्द' शब्द का प्रयोग किया था जैसा पहले लिखा है।

आक्षेप 6 :

वेद का सिन्धु शब्द सामान्यतः सागर का वाचक है न कि नदी विशेष, प्रदेश विशेष, तन्निवासी लोक विशेष का वाचक है। अतः वेद के 'सिन्धु' शब्द से 'हिन्दु' को जोड़ना ठीक नहीं है।

समाधान

वस्तुतः इस प्रकार के आक्षेप करने वाले व्यक्ति यह नहीं समझते कि वेद की शब्दावली से ही लोक में नाम रखे जाते हैं जिनका मूल वेद ही है। पुनः स्मरण कराने के लिए मनुस्मृति का प्रमाण प्रस्तुत किया जा रहा है।

सर्वेषां तु नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेद शब्देभ्य एवाऽऽदौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे॥

(मनुस्मृति 1/11)

भावार्थ—सब पदार्थों के नाम और भिन्न-भिन्न कर्म तथा पृथक् पृथक् विभाग आदि सृष्टि के प्रारम्भ में वेद के शब्दों से ही बनाए गए।

इस प्रमाण से यह आक्षेप निराधार सिद्ध हो जाता है।

आक्षेप 7 :

वर्णाश्रमी, वेद के परम प्रमाणी, आर्य समाजी एवं सनातनी पौराणिकों के साथ वर्णाश्रम विरोधी जैन, बौद्ध एवं नास्तिकों को भी एक हिन्दू नाम के अन्तर्गत कैसे रखा जा सकता है?

समाधान

हिन्दुत्व के विषय में संकीर्ण दृष्टि रखने वाले विद्वानों को ही इस प्रकार की शंकाएँ उत्पन्न होती हैं। वस्तुतः यही हिन्दुत्व की विशालता

एवं व्यापकता का प्रमाण है कि हिन्दू अपने आप में वर्णाश्रमी एवं वर्णाश्रम विरोधी दोनों को ही समाहित कर लेता है। हिन्दू अपने अन्दर भारतीय धार्मिक, आध्यात्मिक तथा लौकिक जीवन दर्शन से उद्भूत सभी विचारों को बिना किसी विरोधाभास के आत्मसात कर लेता है। इसका सबसे सुन्दर उदाहरण यह है कि स्वामी दयानन्द जी ने अमृतसर के कमिश्नर एच. परकिंस को उत्तर देते हुए कहा (जिसे पूर्व के पृष्ठों में ही विस्तार से पढ़े) कि **सभी मत मतान्तर इस विशाल हिन्दुत्व रूपी समुद्र में विलीन हो जाते हैं।** चिन्तन की स्वतंत्रता ही हिन्दुत्व की विलक्षणता एवं व्यापकता है।

9. विद्वानों की दृष्टि में हिन्दू धर्म

श्री विनायकराव दामोदर सावरकर

हिन्दुत्व, हिन्दूराष्ट्र अथवा हिन्दूवा से एक ऊँची तथा व्यापक दृष्टिकोण पर आधारित जीवन की मीमांसात्मक प्रणाली है जो विश्वशान्ति और सर्वजन-कल्याण का पथ प्रशस्त करती है। हिन्दुत्व एक शाश्वत वाणी का स्वर ही नहीं है, अपितु है मानवता की ही पर्यावाची अभिव्यक्ति ! हिन्दुत्व इस भूखण्ड की मूल पूंजी है। उसी से धार्मिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय व राजनैतिक मान्यताएँ अनुप्राणित होती हैं।

(हिन्दुत्व पृ. 1)

श्री अरविन्द

हम हिन्दू हैं, और स्वभावतया अपनी चित्त-प्रकृति में आध्यात्मिक, क्योंकि हमें मानवता के लिए जो काम करना है, वह काम ऐसा है जो और दूसरा कोई राष्ट्र सम्पन्न नहीं कर सकता।

भारत आध्यात्मिक प्रयोग की भव्य कार्यशाला, आत्मा की प्रयोगशाला रहा है।

मैं एक आक्रामक और विस्तारशील हिन्दुत्व में विश्वास रखता हूँ, संकीर्णता के साथ रक्षात्मक और आत्म संकोचशील हिन्दुत्व में नहीं।

स्वामी विवेकानन्द

"हमारे पूर्वजों ने बड़े-बड़े और अद्‍भुत-अद्‍भुत कर्म किये हैं, जिनकी समालोचना हम भक्ति और गर्व के साथ करते हैं। परन्तु यह

समय हमारे कार्य करने का है, जिसे देखकर हमारी भावी सन्तान गर्व करेगी और हमें योग्य पूर्वजे समझेगी। हमारे पूर्व-पुरुष कितने ही श्रेष्ठ और महिमान्वित क्यों न हों, प्रभु के आशीर्वाद से, यहाँ जो लोग हैं उनमें से हर एक वह काम कर सकेगा, जिसके आगे पूर्वजों का भी गौरव-सूर्य मलिन हो जायेगा।" (हिन्दू धर्म, पृ. 119-50)

हिन्दू धर्म का मूलमन्त्र है, "मैं आत्मा हूँ, यह विश्वास होना और तद्रूप बन जाना।"

अतः हिन्दुओं की सारी साधना-प्रणाली का लक्ष्य है—सतत अध्यवसाय द्वारा पूर्ण बन जाना, देवता बन जाना, ईश्वर के निकट जाकर उसके दर्शन कर लेना। और इस प्रकार ईश्वर-सान्त्रिध्य को प्राप्त होकर उनके दर्शन कर लेना, उन सर्वलोक पिता ईश्वर के समान पूर्ण हो जाना—यही असल में हिन्दू धर्म है। (हिन्दू धर्म, पृ. 14)

डॉ. ऐनी. बेसेन्ट

हिन्दू धर्म के समावरण में मत, पन्थ और उपदेशों की अत्यधिक विविधता है; हमें परस्पर भिन्न एवं विरोधी उपासना पद्धतियाँ मिलती हैं। तुला के एक छोर पर वैष्णव है, तो दूसरे छोर पर चार्वाक है, सांख्यवादी ईश्वर की उपेक्षा करता है और योगी ईश्वर से एकरूप होने का इच्छुक है। परिकल्पना के लिए अधिकतम अवकाश दिया जाता है, प्रज्ञा को उच्चतम आकाश में उड़ने के लिए पूरी स्वतन्त्रता है। सभी षड्दर्शन वेदों पर आधारित होते हुए भी प्रत्येक ने वेद वचनों का निर्वचन करने में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रयोग किया है।" (हिन्दू जीवनादर्श पृ. 117)

वियोगी हरि

हम सबको हिन्दू होने पर गर्व करना चाहिए। हिन्दू-धर्म वास्तव में ऐसा मानव-धर्म है, जो आज की संघर्षरत दुनिया को सही रास्ता दिखा

सकता है। उसमें कट्टरता के लिए कहीं कोई जगह नहीं है। उसका लक्ष्य उदारता अर्थात् विश्व-बन्धुता का रहा है। हिन्दू-धर्म के मूल सिद्धान्त, विश्व-हित के साथ कहाँ टकराते हैं? सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, समानता, क्षमा, शौच, श्रद्धा, सरलता और पारस्परिक सद्व्यवहार इन सिद्धान्तों पर हिन्दू-धर्म आधार रखता है, और उसे रखना ही होगा। इन सिद्धान्तों के विपरीत यदि वह जायेगा तो अपना अस्तित्व टिका नहीं सकेगा। ऐसा होगा नहीं। विश्व उसकी ओर और वह विश्व की ओर हाथ बढ़ा रहा है। सत्य कभी असत्य में परिणत होने वाला नहीं, और प्रेम कदापि द्वेष का रूप लेने लावा नहीं। **(हिन्दू धर्म, पृ. 58)**

हिन्दू-धर्म क्या है? इसे समझने के लिए हिन्दू संस्कृति और हिन्दू दर्शन को समझना आवश्यक है। हिन्दू-धर्म उस तरह का धर्म नहीं है, जिस तरह का धर्म इस्लाम धर्म है या जिस तरह का धर्म ईसाई धर्म है। इस्लाम धर्म को मानने वाले लोग हजरत मुहम्मद साहब को अपने धर्म का प्रवर्त्तक और अपना पैगम्बर (ईश्वरीय दूत) मानते हैं। वे कुरान शरीफ को अपना एकमात्र धर्म-ग्रंथ स्वीकार करते हैं और उसमें दी गई आचरण-संहिता को शरीयत या ईश्वर और धर्म का कानून समझते हैं, जिसका पालन करना उनके लिए जरूरी है। इसी प्रकार ईसाई धर्म को मानने वाले लोग यीशु मसीह को कुमारी मरियम के पेट से उत्पन्न ईश्वर का पुत्र मानते हैं। वे इंजील या बाइबिल को अपना एकमात्र धर्म-ग्रंथ स्वीकार करते हैं और उसमें यीशु मसीह द्वारा निर्धारित आचरण संहिता का पालन करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। हिन्दू-धर्म को मानने वाले, या हिन्दू कहे जाने वाले, किसी एक देवदूत को या केवल किसी एक ऋषि को अपने धर्म का प्रवर्त्तक नहीं मानते हैं। न उनका कोई अकेला ऐसा धर्म-ग्रंथ है, जिसमें उल्लेख की गई आचरण-संहिता का पालन करना उनके लिए आवश्यक हो। (हिन्दू धर्म, पृ. 8-9)

"हिन्दुओं को जितनी स्वतन्त्रता उपासना और पूजा के बारे में है, उतनी ही स्वतंत्रता कर्म-कांड, रीति-रिवाजों, वेश-भूषाओं आदि के बारे में भी है। आचरण की इतनी स्वतंत्रता होते हुए भी हिन्दू अपनी संस्कृति, अपने दर्शन और अपनी सामाजिक मान्यताओं के कारण एक विशाल समाज के रूप में एक-दूसरे से आपस में बंधे हुए हैं, आज से नहीं, हजारों वर्षों से। बार-बार के बाहरी हमलों और आंतरिक तनावों के बावजूद ये बंधन शिथिल नहीं हो पाये हैं। यह सचमुच एक चमत्कार है। मिस्त्र, यूनान, रोम, बेबीलोनिया, फिलिस्तानी आदि राष्ट्रों की अनेक संस्कृतियाँ नष्ट हो गई, लेकिन हिन्दू-संस्कृति प्रायः अपने मूलरूप में आज तक सुरक्षित है। यह कैसे सम्भव हो सका है, और हिन्दू संस्कृति किन-किन दौरों से गुजरती हुई अपनी वर्तमान स्थिति तक पहुँची है, यह बात हमको समझनी चाहिए।

श्री लक्ष्मीनिवास बिड़ला ने बहुत उचित बात कही है, "हिन्दू-धर्म केवल धर्म नहीं है, जैसे इस्लाम धर्म या ईसाई धर्म है। यह सनातन धर्म या मानवधर्म है, अर्थात् यह शाश्वत या हमेशा रहने वाला धर्म है। उसमें सभी कुछ शामिल है। असल में यह एक जीवन दर्शन है।"

(हिन्दू धर्म पृ. 10)

10. हिन्दू युवकों को आह्वान

हिन्दुओं का इतिहास ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशल, दर्शन, साहित्य, संगीत, उद्यम, साहस, वीरता, धन-वैभव का चरमोत्कर्ष रहा है। विगत दो सहस्त्र वर्षों के भीषण संघर्ष में इसने यूनान, रोम, मिश्र, फ़ारस और इन्काओं जैसे राष्ट्रो को नष्ट कर देने वाले बर्बर मतान्ध शक्तियों का मान मर्दन कर देने का महान शौर्य तथा बल विक्रम प्रदर्शित किया है। इस विगत संघर्ष काल में इसने बड़े ही अपमान, अवहेलना, दमन, उत्पीड़न, और पराधीनता को भी झेला है। विगत संघर्ष में इसने-अपनी पावन मातृभूमि को सिकुड़ते तथा खंडित होते देखा है। अपने करोड़ों बन्धु बान्धवों को बलात् मुसलमान और ईसाई बनते देखा है। अपमानित एवं भूमिसात होती देवप्रतिमाओं एवं मंदिरों को भी देखा है। अपने जलते विश्वविद्यालय एवं महान पुस्तकालयों को देखा है। अपने माताओं एवं बहनों के शील भंग होते देखा है।

आज भी हिन्दू संघर्षरत है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि संघर्ष करते-करते हिन्दू क्लान्त-सा एवं किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा हो गया है। हिन्दू की इस अवस्था का राजनैतिक लाभ उठाकर विरोधी शक्तियों ने इसे छिन्न-भिन्न कर विनष्ट करने के लिए अपने चतुर्पक्षीय आक्रमण तेज़कर दिये हैं। आज हिन्दू पर तीव्र धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं बौद्धिक आक्रमण हो रहे हैं। आज कुछेक अपवादों को छोड़कर, सभी राजनीतिक दल हिन्दुओं का विरोध करने के लिए कटिबद्ध रहते हैं। सामाजिक दृष्टि से वे हिन्दुओं को सवर्ण, हरिजन, पिछड़े और दलितों के नाम पर

विभाजित करते जा रहे हैं। आर्थिक गुलामी की ओर ले जाने के लिए इसे विदेशी ऋण तथा बहुराष्ट्रीय निगमों के जाल में उलझा दिया है। प्रचार माध्यमों पर आत्महीन हिन्दू विरोधी बुद्धिजीवियों का नियंत्रण है। अपने आपको बड़े सेकुलर बनाने की होड़ में ये हिन्दू विरोध का एकमेव सूत्र अपना रहे हैं। पेट्रो डालर तथा पौंड़ की सहायता से सेवा की आड़ में धर्मांतरण कर राष्ट्रान्तरण का घातक खेल खेला जा रहा है। घुसपैठ करवाकर क्षेत्रीय असंतुलन को बढ़ावा दिया जा रहा है। विदेशी सहायता से उग्रवाद व अलगाववाद का षडयंत्र जोर शोर से चल रहा है। आज भारत के प्रत्येक कस्बे से लेकर महानगर तक में एक लघु पाकिस्तान बन रहा है। पूर्वोत्तर भारत ईसाई लैंड़ बन गया है। ईसाई व इस्लामी आतंकवाद पूरा पैर जमा चुका है।

आज हिन्दू चारों ओर से अपने आपको चक्रव्यूह में घिरा पाता है। इस चक्रव्यूह से निकलने के लिए हिन्दुओं को अपनी जड़ता को फेंकना होगा। चक्रव्यूह तोड़ने हेतु साहस और धैर्य के साथ कटिबद्ध होना पड़ेगा। वीर सावरकर जी के घोष वाक्य "राजनीति का हिन्दूकरण एवं हिन्दुओं का सैनिकीकरण करो" के साथ ही साथ देश का औद्योगीकरण करना होगा। आज प्रत्येक हिन्दू को शास्त्र व लेखनी के साथ-साथ शस्त्र पकड़ने की भी परम आवश्यकता है।

हिन्दू समाज को संगठित एवं जागृत करने के लिए सभी प्रकार के राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आन्दोलन करने होंगे। प्रचार तंत्र के इस युग में सुदृढ़ बौद्धिक संगठन खड़ा कर आन्दोलन करना होगा। भावी पीढ़ी को समस्याओं से अवगत कराने तथा उसका सामना करने के लिए युवकों एवं छात्रों को संगठित करना होगा। हिन्दुओं पर मंडरा रहे खतरों की भयंकरता जानने के लिए गहन अध्ययन कर

विश्लेषण करना चाहिए तथा सर्व सामान्य हिन्दुओं को भी खतरों की भयंकरता से अवगत कराना चाहिए। यह सब तब ही संभव होगा जब प्रचण्ड देश भक्ति की ज्वाला को लेकर सुशिक्षित युवा, अपना सर्वस्व राष्ट्रार्पण कर, कर्म क्षेत्र में उतरेंगे। उनके कार्यों को गति देने में आधुनिक भामाशाहों को आना होगा।

जब हिन्दू अनन्त उत्साह, धैर्य, साहस, व कर्मठता के साथ नैराश्य और आलस्य को त्याग कर संघर्ष पथ पर आगे बढ़ेगा तो निश्चय ही उसकी विजय होगी। क्योंकि अब तक के संघर्ष में हम मृत्युंजयी सिद्ध हुए हैं। हमें नष्ट करने के प्रयास विफल रहे हैं। अतः भविष्य में भी निश्चित ही विजय होगी। संघर्षों से तपकर हिन्दू अजेय बनकर देदीप्यमान होगा। हमारा अतीत गौरवशाली था, वर्तमान संघर्षमय है। हम इसी संघर्ष पथ पर दृढ़ता के साथ अपने संपूर्ण सामर्थ्य एवं प्रतिभा के साथ डटे रहे तो भविष्य और भी अधिक गौरवशाली होगा।

महा पुरुषों की चेतावनियाँ एवं आह्वान

स्वामी विवेकानन्द का ''राष्ट्रदेव की पूजा'' का आह्वान

''आगामी पचास वर्ष के लिए यह जननी जन्म भूमि भारतमाता ही हमारी आराध्य देवी बन जाए। तब तक के लिए हमारे मस्तिष्क से व्यर्थ के देवी-देवताओं के हट जाने में कुछ भी हानि नहीं है। अपना सारा ध्यान इसी एक ईश्वर पर लगाओ, हमारा देश ही हमारा जागृत देवता है। सर्वत्र उसके हाथ हैं, सर्वत्र उसके पैर हैं, और सर्वत्र उसके कान हैं। समझ लो कि दूसरे देवी-देवता सो रहे हैं जिन व्यर्थ के देवी-देवताओं को हम देख नहीं पाते, उनके पीछे तो हम बेकार दौड़े और जिस विराट् (राष्ट्र) देवता को हम अपने चारों ओर देख रहे हैं उसकी पूजा ही न करें? जब हम इस प्रत्यक्ष देवता की पूजा कर लेंगे तभी हम दूसरे देव-देवियों की पूजा करने ''योग्य होंगे, अन्यथा नहीं'' (भारत का भविष्य पृ. 19)।

हिन्दुओं को प्रेरणा देते हुए स्वामी जी कहते हैं "**उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत**" (कठोप. 1.3.4) यानी उठो, जागो और **लक्ष्य प्राप्ति से पहले रुको नहीं**। यानी पूर्ण हिन्दूराज्य स्थापित करो। हिन्दू के अस्तित्व की सुरक्षा का यही एकमेव मार्ग रह गया है।

योगी श्री अरविन्द का राजनैतिक जागृति का आह्वान

योगी श्री अरविन्द ने 1918 में युवकों का कहा :

"**मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि ऐसी सभी बातों को मेरा पूर्ण समर्थन मिलेगा जो एक शक्तिशाली समाज के ढांचे में व्यक्ति के जीवन को मुक्त करने और सशक्त बनाने में सहायक हों तथा उस स्वाधीनता और ऊर्जा को फिर से वापस दिलायें जो भारत के पास उसकी महानता और विस्तार के वीरत्वपूर्ण काल में थी। हमारे अनेक वर्तमान सामाजिक ढांचे जब गढ़े गये थे, हमारी अनेक रीति-नीति व परम्पराएँ जब उत्पन्न हुए थे, वह समय सिकुड़न और अवनति का था। आत्मरक्षा और टिके रहने के लिए संकीर्ण सीमाओं में उनकी उपादेयता थी, पर वर्तमान घड़ी में, जब हमसे एक बार फिर एक स्वतंत्र और साहसपूर्ण आत्म रुपांतरण और विस्तार में प्रविष्ट होने की अपेक्षा की जा रही है, वे हमारी प्रगति में रुकावट बन रही हैं। मैं एक आक्रामक और विस्तारशील हिन्दुत्व में विश्वास करता हूँ, संकीर्णता के साथ रक्षात्मक और आत्मसंकोचशील हिन्दुत्व में नहीं।....**"

"**सर्व साधारण लोगों को सम्मिलित व राष्ट्र के नवजागरण में करना, भविष्य की महानता को अतीत की महानता पर आधारित करना, भारतीय राजनीति को भारतीय धार्मिक भाव-प्रवणता और आध्यात्मिकता में भिगोना-ये भारत में एक महान और शक्तिशाली राजनैतिक जागृति की अपरिहार्य शर्तें हैं।**" (1918, भारत का पुनर्जन्म पृ. 140.)

"हम प्रकृति के जंगल में से चीरकर अपनी राह निकालने वाले

अग्रदूत हैं। कायर और कामचोर बनने तथा भार उठाने से मना करने और सब कुछ हमारे लिए शीघ्र और सरल बनाये जाने हेतु शोर मचाने से काम नहीं चलेगा। सबसे ऊपर मैं तुमसे सहनशीलता, दृढ़ता, वीरता-सच्ची आध्यात्मिक वीरता की मांग करता हूँ। मुझे शक्तिशाली मनुष्य चाहिएँ। भावुक बच्चे मुझे नहीं चाहिएँ।'' (1919 वही. पृ. 154)

''एक अकेले वीर का संकल्प हजारों कायरों के हृदय में साहस फूंक सकता है।'' (1920 वही. पृ. 157)

''भारत के नवजन्म का पहला व प्रधान काम होगा भारत के प्राचीन अध्यात्म-ज्ञान की प्रतिष्ठा—उसी तरह गंभीर, समृद्ध, अखण्ड और सभी महिमा-गरिमा से परिपूर्ण। दूसरा काम होगा दर्शन, साहित्य, शिल्प, विज्ञान, मीमांसक-ज्ञान के नवीन आकारों में इस आध्यात्मिकता को प्रवाहित कर देना। और तीसरा काम, सबसे कठिन काम होगा, भारत की अंतरात्मा का जो धर्म है उसे ही पकड़ उसी की सहायता से एक नये ढंग से सारी आधुनिक समस्याओं के समाधान की चेष्टा, समाज को आध्यात्मिकता का ही जाग्रत विग्रह बना देने के लिए एक बृहत्तर समन्वय-सूत्र की खोज का प्रयास।

अगर हमें सचमुच जीवित रहना है तो हमें भारत के उस महान् प्रयत्न को, जिसमें व्यवधान आ गया है, फिर से जारी करना होगा। हमें उसके उच्चतम आंतरिक आशय और ज्ञान के पूर्ण व असीम तात्पर्य को साहस सहित हाथ में ले व्यक्ति व समाज में, आध्यात्मिक और लौकिक जीवन में, दर्शन और धर्म में, कला और साहित्य में, एवं आर्थिक और सामाजिक संगठन में भली-भांति, दृढ़तापूर्वक कार्यरूप में परिणत करना होगा।

हमने अपने सामने जो काम रखा है वह यांत्रिक नहीं है, किन्तु नैतिक और आध्यात्मिक है। हमारा लक्ष्य किसी एक प्रकार की सरकार को बदल डालना नहीं है, प्रत्युत एक राष्ट्र का निर्माण करना है। उस काम का राजनीति भी एक भाग है, परन्तु एक भाग मात्र है। हम अपनी सारी शक्ति

राजनीति पर ही नहीं लगाएँगे, नाही केवल सामाजिक प्रश्नों पर या ब्रह्मविद्या का दर्शन या साहित्य या विज्ञान के विषयों पर, परन्तु इन सबको हम उस एक ही वस्तु के अन्तर्गत समझते हैं जिसे हम सबसे आवश्यक मानते हैं। वह वस्तु है धर्म, राष्ट्रीय धर्म, जो हमारा विश्वास है, सार्वभौम भी है।''

—श्री अरविन्द का राष्ट्र को आह्वान

डॉ. ऐनी बेसेन्ट का हिन्दुत्व के प्रति निष्ठावान रहने का आह्वान

भारत के भविष्य के बारे में चिंतित डॉ. ऐनी बेसेन्ट ने (1947 से पहले) इन जोरदार शब्दों में आह्वान किया।

''.......भूलिये नहीं। *हिन्दु धर्म के बिना भारत का कोई भविष्य नहीं।* हिन्दु धर्म वह भूमि है जिसमें भारत की जड़ें गहरी जमी हुई है और यदि उस भूमि से उसे उखाड़ा गया तो भारत वैसे ही सूख जायेगा जैसे कोई वृक्ष भूमि से उखाड़ने पर सूख जाता है। भारत में अनेक मत, सम्प्रदाय और वंशों के लोग पनप रहे हैं—किन्तु उनमें से कोई भी न तो भारत के अतीत के उषाकाल में था, न उनमें से कोई राष्ट्र के रूप में उसके स्थायित्व के लिये अनिवार्यतः आवश्यक है। इनमें से प्रत्येक जैसे आया वैसे चला भी जाएगा? भूतकाल की केवल 'भौगोलिक अभिव्यक्ति', विनष्ट गौरव की एक धुंधली स्मृति! भारत के इतिहास, साहित्य, कला, स्मारक, प्रत्येक पर हिन्दू धर्म की छाप अंकित है। यहाँ पारसियों का जरथुष्ट् मत शरण माँगनें आया और उसकी सन्तानों को यहाँ आश्रय और सत्कार प्राप्त हुआ—फिर भी हो सकता है जरथुष्ट् मत चला जाए तो भी भारत बना रहेगा। बौद्धमत यहीं स्थापित हुआ, किन्तु बौद्धमत लुप्त हो गया, भारत फिर भी बना रहा। इस्लाम आया, आक्रमण की एक लहर आयी, आज मुसलमान भारतीय जनो के अंग के रूप में विद्यमान हैं और भारत के भविष्य के निर्माण के सहभागी होंगे—फिर भी इस्लाम चला

जाए, तो भारत रहेगा। ईसाई मत आया, ईसाई इस भूमि पर शासन कर रहे हैं, यहाँ की गतिविधियों को प्रभावित करते हैं। फिर भी ईसाई मत चला जाए, तो भी भारत भारत रहेगा ।

इन सबके आगमन के पूर्व भारत था, इनके निर्गमन के बाद भी यह रहेगा। परन्तु यदि हिन्दू धर्म चला गया, वह हिन्दू धर्म जो भारत भूमिसात हो जाएगा, उसकी समाधि बन जायेगी, जैसे आज मिस्त्र और उसका धर्म है। फिर भारत किसी पुराविशेषज्ञ अथवा पौरातनिक की रूचि का विषय बन कर रहा जायेगा—विच्छेदन योग्य शव बन जायेगा—देशभक्ति की वस्तु नहीं रहेगा, एक राष्ट्र नहीं रहेगा।

यदि आप हिन्दू धर्म को छोड़ देते हैं तो आप अपनी भारत माता के हृदय में छुरा भोंकते हैं। यदि भारतमाता के जीवन-रक्त स्वरूप हिन्दू धर्म निकल जाता है तो माता गतप्राण होगी। आर्य जाति की यह माता, यह जगत-सम्राज्ञी पहले ही आहत, विक्षत, विक्षित और अवनत हुई है—किन्तु धर्म उसे जीवित रखे हुए है अन्यथा उसकी गणना मृतकों में हुई होती।

यदि आप अपने भविष्य को मूल्यवान समझते हैं, अपनी मातृभूमि पर प्रेम करते हैं तो अपने प्राचीन धर्म पर अपनी पकड़ छोड़िए नहीं, उस निष्ठा से च्युत न होइए जिस पर भारत के प्राण निर्भर है। हिन्दू धर्म के अतिरिक्त अन्य किसी धर्म की रक्त वाहिनियाँ ऐसी शुद्ध स्वर्ण की, ऐसी अमूल्य नहीं हैं जिनमें आध्यात्मिक जीवन का रक्त प्रवाहित किया जा सके।

मैं आपको यह कार्यभार सौंप रही हूँ, हिन्दूधर्म के प्रति निष्ठावान रहो, वही आपका सच्चा जीवन है। कोई धर्मभ्रष्ट कलंकित हाथ आपको सौंपी गई इस पवित्र धरोहर को स्पर्श न कर सके।'' (हिन्दु जीवनादर्श पृ. 135-136)

मुख्य सारांश

- हिन्दू शब्द निश्चय ही वेदों में नहीं है। यह नाम बहुत बाद की देन है जिसके प्रमाण वेदोत्तरकाल के शब्दकोशों एवं संस्कृत साहित्य में मिलते हैं।
- हिन्दु शब्द की उत्पत्ति मूल रूप से ऋग्वेद के 'सप्त सिन्धु' एवं अन्य वेदों के 'सिन्धु' शब्द से हुई है।
- संस्कृत के अन्य अनेक शब्दों की तरह लौकिक भाषा में 'सकार' का 'हकार' हो जाने के नियम के अनुसार 'सिन्धु' शब्द से 'हिन्दु' शब्द की उत्पत्ति हुई है। वास्तव में हिन्दु शब्द वेदों के सिन्धु शब्द का ही परिवर्तित रूप है जो आज बोल-चाल व व्यवहार में 'हिन्दु' से 'हिन्दू' हो गया है।
- संस्कृत भाषा से परिवर्तित अनेक शब्द हमें आज भी भारत की अनेक भाषाओं जैसे पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती और असमिया आदि भाषाओं में भी मिलते हैं।
- हिन्दुस्थान व सिन्धुस्थान एवं हिन्दुओं में पाए जाने वाले सेन्धु, सिद्धु सिन्धुजा, हिन्दुजा आदि जातिवाचक शब्द 'सिन्धु' और 'हिन्दु' की समीपता को प्रगट करते हैं।
- कुछ पक्षपाती एवं धर्मान्ध मुसलमानों ने भारत में छपे फ़ारसी भाषा के शब्द कोशों में 'हिन्दू' शब्द का अर्थ काला, चोर आदि किया है जो कि पूर्णतया ग़लत है जबकि ईरान के फ़ारसी व अन्य अरबी शब्द कोशों में 'हिन्दु' शब्द का अर्थ हिन्द का निवासी, सुन्दर, हिन्दू धर्म का अनुयायी, पुण्यभूमि (हिन्द) आदि भावों में किया है। आज भी ईराक में अनेक लोग अपने लड़के व लड़कियों के नाम 'हिन्द' यानी 'सुन्दर' इस भाव में रखते हैं।

- हमारा 'हिन्दु' नाम ईरानियों, विदेशियों या मुसलमानों ने नहीं दिया है। यह नाम तो यहाँ हजारों वर्षों से प्रचलित था। विदेशियों ने तो इस शब्द का केवल प्रयोग मात्र ही किया है। यह उनकी देन नहीं है।
- हमारा 'हिन्दु' नाम चार हजार वर्ष पुराने प्राचीन शिला लेखों तक में मिलता है। इकत्तीस सौ वर्ष पुराने प्रसिद्ध अरबी कवि लबि, बिन अरवतब बिना तुर्फी के अपनी कविताओं में 'हिन्द'—हिन्द की पुण्यभूमि और 'हिन्दुतुन'—हिन्द के ऋषियों आदि शब्दों को प्रयोग किया है। यह शब्द निश्चय ही इस्लाम की उत्पत्ति से बहुत पहले का है।
- 'हिन्दु' शब्द का वेदों के सिन्धु से जुड़े होने के कारण हिन्दू धर्म, सत्य सनातन (वैदिक धर्म) धर्म का ही दूसरा नाम है। हिन्दू संस्कृति और हिन्दू समाज के समस्त गौरवपूर्ण इतिहास में वेदों की आध्यात्मिकता और राष्ट्रीयता की प्रेरणा सतत प्रवाहमान रही है।
- अतः 'हिन्दू' शब्द में इसकी प्राचीनता, विश्वव्यापी मानव कल्याणकारी आध्यात्मिकता तथा सांस्कृतिक एकात्मता और तेजस्वी, वर्चस्वी व यशस्वी इतिहास की झांकी एक साथ ही देखने को मिलती है, इसीलिए वर्तमान में लोकप्रियता 'हिन्दुत्व' शब्द में इन सभी भावों की झलक एक साथ दिखती है।
- निश्चय ही हिन्दु, हिन्दुत्व और हिन्दुस्थान गर्व के विषय हैं।

हिन्दू धर्म जागरण मंत्र

- **धर्मो रक्षति रक्षितः** (मनु : 3.56)
  धर्म उसी की रक्षा करता है जो स्वयं धर्म की रक्षा करता है।
- **कृणवन्तो विश्वमार्यम्** (ऋ 9.6.3.5)
  विश्व के लोगों को आर्य बनाओ।
- **अग्रतः चतुरो वेदाः प्रष्टतः सशरोधनु।**
  इदं ब्राह्मं इदं क्षात्रं शास्त्रादपि शस्त्रादपि। (महाभारत)
  चारों वेदों की प्रामाणिकता और शस्त्र बल से धर्म को पुष्ट करो। एक तरफ शास्त्रादि के ब्राह्म बल और दूसरी तरफ शस्त्रादि के क्षात्र बल से धर्म की रक्षा करो।
- धर्म पालन और अधर्म का विनाश ही जीवन है।
- धर्म पालन जीवन और धर्मान्तरण मृत्यु है।
- धर्म पालन ही धर्म रक्षा है।
- धर्म रक्षा ही ईश्वर पूजा है।
- धर्म रक्षा ही राष्ट्र रक्षा है।
- धर्म रक्षा ही ईश्वर भक्ति है।
- धर्म की नींव निष्ठा और बलिदान से सुदृढ़ करो।
- धर्मार्थ बलिदान सर्वोत्तम पुण्य है। (गीता 3.35)
- धर्मार्थ दान बिना, धन भोगना महा पाप है।
- धर्मार्थ दान सर्वोत्तम दान है।
- आध्यात्मिकता का रास्ता स्वराज्य से होकर जाता है।
- स्वराज्य और स्वधर्म एक दूसरे के पूरक हैं।
- हिन्दू की रक्षा ही देश की रक्षा है।
- हिन्दू की रक्षा ही मानवता की रक्षा है।

- स्वराष्ट्र, सर्वोपरि देवता है, पहले उसकी पूजा करो।
- स्वराज्य, स्वधर्म का रक्षा कवच है।
- स्वराज्य के बिना धर्म अपंगु और अनाथ है।
- सैक्यूलरवाद हिन्दुओं के लिए अभिशाप है।
- धर्मार्थ बलिदान से बढ़कर कोई बलिदान नहीं है।
- परिवार नियोजन हिन्दुओं के लिए आत्मघाती है।
- प्रजातंत्र में सिर गिने जाते हैं, धन-दौलत नहीं।
- हिन्दुओं का सैनिकीकरण और राजनीतिक का हिन्दूकरण करो।
- हिन्दू धर्म में कोई दलित, वंचित व उपेक्षित नहीं, सभी बराबर हैं।
- धर्मान्तरण राष्ट्रान्तरण है।
- धर्मान्तरण निरोध धर्म युद्ध है।
- धर्मान्तरणकारी आततायियों का विरोध शास्त्र सम्मत है।
- धर्मान्तरण निरोध स्वर्ग की सीढ़ी है।
- धर्म पालन पुण्य और धर्मान्तरित होना महापाप है।
- हिन्दू की रक्षा ही राम, कृष्ण, वेद, गीता और रामायण की रक्षा है।
- परधर्म भयानक है (गीता 3.35)
- धार्मिक सत्संगों में धर्म रक्षा की सामूहिक प्रतिज्ञा लो।
- पहले धर्म जागरण में जुटजाओं अन्य काम बाद में करो।
- धर्म रक्षा के बलिदानी बनो।
- प्रत्येक हिन्दू मन्दिरों की रक्षा की प्रतिज्ञा ले।
- धर्माचार्य हिन्दुओं को राष्ट्र एवं धर्म रक्षा के लिए प्रेरित करें।
- प्रत्येक हिन्दू तन-मन धन से धर्म जागरण में जुट जाए।
- प्रत्येक हिन्दू सब प्रकार से स्वदेश, स्वधर्म, स्वभाषा, स्वसाहित्य और स्वसंस्कृति की रक्षा का व्रत ले।
- दृढ़ विश्वास रखो तुम धर्म रक्षा में विजयी होगे।



हिन्दू धर्म की विशेषताएँ

1. हिन्दू धर्म—जनतन्त्रवादी है, अधिनायकवादी नहीं।
2. हिन्दू धर्म—बुद्धिवादी है, पैगम्बरवादी नहीं।
3. हिन्दू धर्म—अध्यात्मवादी है, जड़वादी नहीं।
4. हिन्दू धर्म—श्रद्धावादी है, अन्धभक्तिवादी नहीं।
5. हिन्दू धर्म—ज्ञानवादी है, अन्धभक्तिवादी नहीं।
6. हिन्दू धर्म—आशावादी है, निराशावादी नहीं।
7. हिन्दू धर्म—उत्थानवादी है, मतवादी नहीं।
8. हिन्दू धर्म—कर्मवादी है, मतान्धवादी नहीं।
9. हिन्दू धर्म—त्यागवादी है, भोगवादी नहीं।
10. हिन्दू धर्म—समतावादी है, विभेदवादी नहीं।
11. हिन्दू धर्म—मानवतावादी है, रंग, नस्ल भेदवादी नहीं।
12. हिन्दू धर्म—सौहार्द्रवादी है, आतंकवादी नहीं।